ओ३म्

ई वैदिक पुस्तकालय
मुम्बई

सत्यार्थप्रकाश में क्या है?

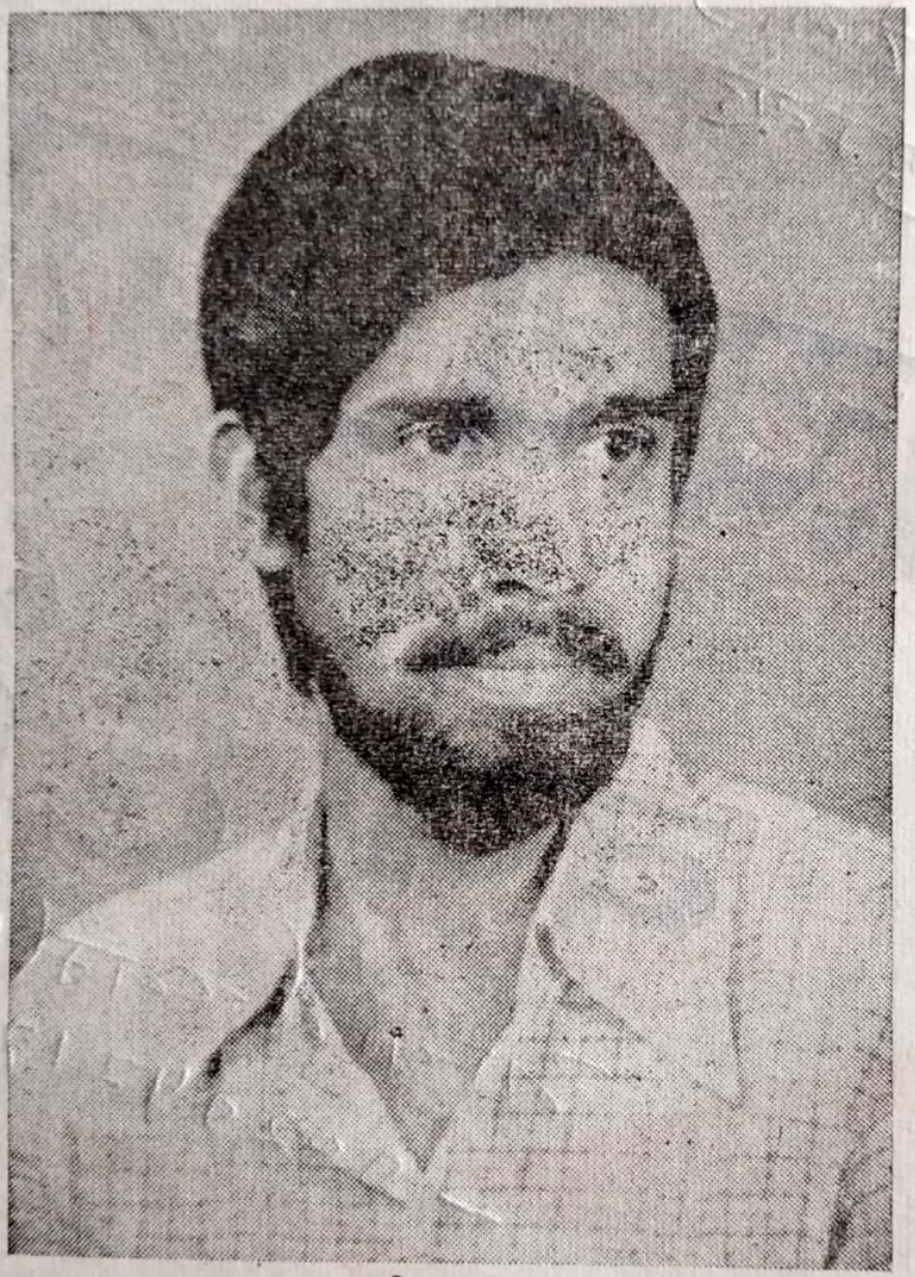
आचार्य धर्मपाल
9029421718

कैलाश सत्यार्थी

दयानन्द संस्थान
वेद मन्दिर - दिल्ली - ११००३६

Scanned with CamScanner

प्रकाशक —
पंडिता राकेशरानी अध्यक्ष
दयानन्द संस्थान
१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग,
करौल बाग, नई दिल्ली-११०००५
दूरभाष : ५६६६३९



—लेखक—

मार्च १९७९ श्री कैलाश सत्यार्थी मूल्य ८० पैसे

सत्यार्थप्रकाश संसार के इतिहास में अपने ढंग का अकेला धर्म ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में सभी विषयों का गहनतम विवेचन—स्पष्टीकरण—मार्गदर्शन किया गया है। वस्तुत: यह एक महान् व्यक्ति की महानतम रचना है जिसकी उपमा नहीं।

Scanned with CamScanner

अपनी ओर से

सत्यार्थ प्रकाश में क्या लिखा है ? इस प्रश्न का हमारा उत्तर है कि सत्यार्थ प्रकाश में क्या नहीं लिखा ? ज्ञान, धर्म, दर्शन, अध्यात्म, समाज-शास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीति, व्यवहार, मुक्ति और गृहस्थ विज्ञान और ब्रह्माण्ड की कौन सी समस्या है जिस पर ऋषि दयानन्द ने अपना सुलझा मार्ग दर्शन प्रस्तुत नहीं किया है ।

गागर में सागर की उपमा तो आपने सुनी होगी पर उसका प्रमाण यदि कहीं हमें मिला है तो केवल सत्यार्थ प्रकाश में । यह ग्रन्थ पढ़कर मन मन्दिर में जो प्रकाश झरता है, उसकी उपमा शब्दों में तो देनी सम्भव नहीं ।

सत्यार्थ प्रकाश का एक-एक शब्द स्वयं बोलता हुआ, दर्शन का निर्झर है, उसकी प्रत्येक पंक्ति ज्योतिर्मय है । उसकी एक मात्रा में प्राणों को स्पन्दित करने की सामर्थ्य है ।

कभी सोचता हूं कितना महान् था देव दयानन्द जिसने अमरता के द्वार की कुंजी हमें दी । और कितने छोटे हैं हम कि उस अमोघ औषधि का वितरण न कर संजीवनी सुधा मानव मात्र को न पिला पाए ।

सत्यार्थ प्रकाश पर एक पृथक अनुसन्धान विभाग एक शती तक कार्य करे तब भी उनकी सहज व्याख्या करनी सम्भव है, हमें इसमें सन्देह है ।

फिर भी चिरंजीव पुत्र कैलाश ने हमारे संकेत पर शिवरात्रि के दिन भागते-दौड़ते चन्द घन्टों में इस लघु पुस्तक को लिखकर सत्यार्थ प्रकाश की एक झलक प्रस्तुत करने का सफल प्रयत्न किया है ।

अपार ज्ञान सागर का आवगाहन करने की प्रेरणा इसे पढ़कर पाठक पा सकेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है । प्रिय कैलाश को इस प्रयत्न के लिए आशीर्वाद देते हुए हम कामना करते हैं कि वे अपना जीवन इसी भांति दयानन्द दर्शन-चिन्तन प्रयत्न के प्रति अर्पित कर सकें । इंजीनियर होते हुए भी धर्म के प्रति ऐसी गहरी आस्था हमारे लिए गौरव का विषय है ।

प्रभु हमें शक्ति दे कि हम दयानन्द की भावना को प्रखर वाणी दे सकने में समर्थ हों ताकि अज्ञान, अधर्म, पाखण्ड का मूलोच्छेदन कर धर्म की स्थापना से धरती स्वर्ग बन सके ।

Scanned with CamScanner

सत्यार्थप्रकाश क्यों लिखा गया ?



अन्धकार का आवरण ज्ञान पर छाया था, विवेक का लोप था। सत्य का सौभाग्य अस्त था। सर्वत्र अधर्म धर्म पर अधिकार कर अपनी दुंदुभि बजा रहा था। ऐसे में महर्षि दयानन्द जैसे महान् क्रान्तदर्शी युग निर्माता महापुरुष के द्वारा सत्य की पुनः स्थापना की दृष्टि से इस महान् ग्रन्थ की रचना हुई।

महर्षि दयानन्द ने स्वयं भूमिका में लिखा है कि—"मेरा इस ग्रन्थ को बनाने का प्रयोजन सत्य, सत्य अर्थ का प्रकाश करना है— वह सत्य नहीं कहाता जो सत्य के स्थान में असत्य और असत्य के स्थान में सत्य का प्रकाश किया जाये। किन्तु जो पदार्थ जैसा है उसको वैसा ही लिखना, कहना और मानना सत्य कहाता है।

महर्षि दयानन्द का यह भी विचार था कि —जो मनुष्य पक्षपाती होता है, वह अपने असत्य को भी सत्य, दूसरे विरोधी मत वाले के सत्य को भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है, इसलिए वह सत्य मत को प्राप्त नहीं हो सकता।

महर्षि की इन पंक्तियों से स्वतः प्रमाणित है कि उन्होंने यह महान् ग्रन्थ पक्षपात रहित होकर ही लिखा है। उनके अपने शब्दों में सत्यार्थप्रकाश लिखने का उद्देश्य था "मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो। सत्यासत्य को मनुष्य लोभ जानकर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें, क्योंकि सत्योपदेश के विना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है"। सिद्ध हुआ कि सत्यार्थप्रकाश लिखने का उद्देश्य मनुष्यजाति की उन्नति की भावना है।

महर्षि दयानन्द पक्षपात से कोसों दूर थे। इसका प्रमाण उनके द्वारा लिखी भूमिका के निम्न शब्दों से मिलता है—"यद्यपि मैं आर्यावर्त्त देश में उत्पन्न हुआ और बसता हूं तथापि जैसे इस देश के मत-मतान्तरों की झूठी बातों का पक्षपात न कर यथा तथ्य प्रकाश करता हूं वैसे ही दूसरे देशस्थ वा मत वालों के साथ भी बर्तता हूं। जैसा स्वदेश वालों के साथ मनुष्योन्नति के विषय में बर्तता हूं वैसा विदेशियों के साथ भी, यथा सब सज्जनों को

Scanned with CamScanner

भी वर्तना योग्य है, क्योंकि मैं भी जो किसी एक का पक्षपाती होता, तो जैसे आजकल के स्वमत की स्तुति-मण्डन और प्रचार करते और दूसरे मत की निन्दा, हानि और बाद करने में तत्पर होते हैं, वैसे मैं भी होता, परन्तु ऐसी बातें मनुष्यपन से बाहर हैं''।

अपना भूमिका में महर्षि दयानन्द ने मनुष्य की जो परिभाषा प्रस्तुत की है, यदि सभी उस रूप में मनुष्य हो जायें तो यह धरती स्वर्ग बन जाए। महर्षि लिखते हैं--''जैसे पशु बलवान् होकर निर्बलों को दुःख देते और मार भी डालते हैं। जब मनुष्य शरीर पा के वैसा ही कर्म करते हैं तो वे मनुष्य स्वभावयुक्त नहीं, किन्तु पशुवत् हैं। और जो बलवान् होकर निर्बलों की रक्षा करता है, वही मनुष्य कहाता है और जो स्वार्थवश होकर परहानिमात्र करता है, वह जानो पशुओं का भी बड़ा भाई है''।

सत्यार्थप्रकाश की भूमिका का उपसंहार करते हुए महर्षि दयानन्द लिखते हैं —''सत्यार्थप्रकाश पढ़कर मनुष्य लोग सत्य मत का निर्णय कर सकें और और सत्य का ग्रहण तथा असत्य का त्याग कराने में समर्थ होंवें, क्योंकि एक मनुष्य जाति में बहकाकर विरुद्ध बुद्धि कराकर एक-दूसरे को शत्रु बना, लड़ा, मारना विद्वानों के स्वभाव से बाहर है, इसलिए पक्षपात न करके सत्यार्थ का प्रकाश करना मेरा मुख्य उद्देश्य है।

अत: सत्यार्थप्रकाश लिखने का उद्देश्य था—

१—मानव मात्र की उन्नति।

२—सत्य असत्य का निर्णय।

३—मानव मात्र की एकता।

इन तीन महान् उद्देश्यों की पूर्ति के लिए लिखा गया यह महान् ग्रन्थ पढ़कर कोई भी व्यक्ति न अन्धकार में, न अज्ञान में भटक सकता है।

सत्य का अमृत भण्डार सत्यार्थप्रकाश रूपी घट में परिपूर्ण है—

प्रथम समुल्लास : ईश्वर के नाम १

महर्षि दयानन्द ने पहले समुल्लास में परमपिता परमेश्वर के नामों की व्याख्या बहुत व्याकरणयुक्त ढंग से की है यद्यपि अनन्त गुण, कर्म, स्वभाव वाले ईश्वर के अनन्त नाम हैं, तथापि उन्होंने ईश्वर का निज तथा सर्वश्रेष्ठ नाम ओ३म् बताया है। अ, उ और म् इन तीन अक्षरों से बने इस अत्यन्त सारगर्भित शब्द में अकार से विराट्, विश्व, अग्नि आदि, उकार से हिरण्य-

Scanned with CamScanner

गर्भ वायु, तैजस आदि तथा म कार में आदित्य, प्राज्ञ, ईश्वर आदि नामों का बोध होता है।

परमात्मा के सभी नाम सार्थक हैं। इनमें कुछ गुणवाचक, कुछ कर्मवाचक, व कुछ स्वभाववाचक अर्थ देते हैं, जैसे ईश्वर स्वप्रकाशित है अतः उसे अग्नि कहा जाता है, संसार का रचयिता होने के कारण ब्रह्मा, पालन-पोषण करने वाले व सर्वव्यापक होने से विष्णु और संहारक होने से रुद्र कहा जाता है।

महर्षि जानते थे कि देश में मतों, सम्प्रदायों को जीवित रहने के पीछे बहु-देवतावाद भी मुख्य कारण है जो एक ही परमेश्वर के विभिन्न नामों से अनेक देवी-देवताओं की अज्ञानतापूर्ण कल्पना के कारण फैला हुआ है। दूसरी तरफ जहां वेद के पौराणिक व्याख्याकारों ने इसी नासमझी से जन-साधारण में अनेकों देवताओं को प्रतिष्ठित किया वहीं आधुनिक (नास्तिक) व्याख्याकारों ने इन्हीं नामों को वस्तुवाचक व व्यक्तिवाचक संज्ञाएं बताकर वेद को दीर्घ-कालिक इतिहास बताने के कुतर्क प्रचारित किए।

सैन्धव एक शब्द है जिसके अर्थ 'घोड़ा' तथा 'नमक' होते हैं, अगर खाने की मेज पर बैठे हुए 'सैन्धव' मंगाए जाने पर कोई घोड़ा लाकर प्रस्तुत कर दे तो इसे सन्दर्भ न समझ पाने का दोष ही कहा जाएगा।

ईश्वर के सौ नाम—

इसी तरह महर्षि ने ठोस तर्कों के आधार पर नामों की इस समस्या को हल करके एक साथ ही आस्तिकवाद व एकेश्वरवाद के वैदिक सिद्धान्त की पुष्टि की है। 'ओ३म्' के निज नाम के अतिरिक्त उन्होने और भी सौ सार-गर्भित नाम गिनाए हैं—

१. ओ३म्, २. खम्, ३. ब्रह्म, ४. अग्नि, ५. मनु, ६. प्रजापति, ७. इन्द्र, ८. प्राण, ९. ब्रह्मा, १०. विष्णु, ११. रुद्र, १२. शिव, १३. अक्षर, १४. स्वराट्, १५. कालाग्नि, १६. दिव्य, १७. सुपर्ण, १८. गरुत्मान्, १९. मातरिश्वा, २०. भू, २१. भूमि, २२. अदिति, २३. विश्वधाया, २४. विराट्, २५. विश्व, २६. हिरण्यगर्भ, २७. वायु, २८. तेजस्, २९. ईश्वर, ३०. आदित्य, ३१. प्राज्ञ, ३२. मित्र, ३३. वरुण, ३४. अर्यमा, ३५. बृहस्पति, ३६. उरुक्रम, ३७. सूर्य, ३८. आत्मा-परमात्मा, ३९. परमेश्वर, ४०. सविता, ४१. देव-देवी, ४२. कुवेर, ४३. पृथिवी, ४४. जल, ४५. आकाश, ४६. अन्न, ४७. अन्नाद-अत्ता, ४८. वसु, ४९. नारायण, ५०. चन्द्र, ५१. मंगल, ५२. बुध, ५३. शुक्र, ५४. शनैश्चर, ५५. राहु, ५६. केतु, ५७. यज्ञ, ५८. होता, ५९. बन्धु, ६०. पिता-पितामह, प्रपितामह, ६१. माता, ६२. गुरु. ६३. आचार्य, ६४. अज, ६५. सत्य, ६६. ज्ञान, ६७. अनन्त, ६८. अनादि, ६९. सच्चिदानन्द, ७०. नित्य शुद्ध, बुद्धमुक्त, ७१. निराकार, ७२. निरंजन, ७३.

Scanned with CamScanner

गणेश, ७४. गणपति, ७५. विश्वेश्वर, ७६. कूटस्थ, ७७. शक्ति, ७८. श्री, ७९. लक्ष्मी, ८०. सरस्वती, ८१. सर्वशक्तिमान् ८२. न्यायकारी, ८३. दयालु, ८४. अद्वैत ८५. निर्गुण, ८६. सगुण, ८७. अन्तर्यामी ८८. धर्मराज, ८९. यम, ९०. भगवान्, ९१. पुरुष, ९२. विश्वम्भर, ९३. काल, ९४. शेष, ९५. आप्त, ९६. शंकर, ९७. महादेव, ९८. शिव, ९९. स्वयम्भू, १००, कवि।

सगुण-निर्गुण —

सामान्यतः सगुण और साकार को इसी तरह निर्गुण व निराकार को समानार्थी समझा जाता है। किन्तु इनके अलग भाव होते हैं।

मान लीजिए अग्नि में ज्वलनशीलता का गुण है इसलिए वह सगुण है। किन्तु शीतलता का गुण नहीं है अतः वह निर्गुण भी कही जाएगी। इसी तरह ईश्वर में दयालुता, सर्वज्ञता, सर्वव्यापकता आदि गुण हैं अतः वह सगुण हुआ किन्तु अविद्या, कलेश, रूप, स्पर्श, गंध आदि से मुक्त है अतः इन शब्दों में निर्गुण हुआ।

स्तुति प्रार्थना, उपासना —उसी की करनी चाहिए जो गुण, कर्म, स्वभाव से सर्वश्रेष्ठ है। परमेश्वर ही इसका एकमेव पात्र है।

मंगलाचरण तथा शान्ति पाठ —अंग्रेजी में एक कहावत है 'श्रेष्ठ प्रारम्भ अर्थात् आधी सफलता' इसी तरह मंगलाचरण से आशय है कि किसी भी उत्तम कार्य को 'ओ३म्' नाम से प्रारम्भ किया जाए तथा अन्त तक उसी आधार पर शुभ आचरण किया जाए।

संसार में तीन ही प्रकार के दुःख हैं। पहला आध्यात्मिक अर्थात् अपनी आत्मा व शरीर में अविद्या के कारण, दूसरा आधिभौतिक, शत्रु, वन्यपशु, सर्पादि के कारण तथा तीसरा आधिदैविक, अतिवृष्टि, बाढ़, सूखा, अकाल आदि प्राकृतिक प्रकोपों के कारण। तीनों ही स्थितियों में शान्तिपूर्वक सत्याचरण करते हुए उनसे निवृत्ति की मानसिक तैयारी के लिए शान्तिपाठ करते हुए तीन बार 'ओ३म् शान्तिः-शान्तिः-शान्तिः' स्मरण किया जाता है।

द्वितीय समुल्लास : शिक्षा कैसे ? २

इस समुल्लास में महर्षि दयानन्द ने शिशु के प्रारम्भिक विकास के बहुत मनोवैज्ञानिक तथा सर्वांगीण उपायों की व्याख्या की है।

बालक के उचित मानसिक विकास को महर्षि ने दो भागों में विभाजित किया है। पहला माता-पिता द्वारा, दूसरा आचार्य द्वारा।

Scanned with CamScanner

माता-पिता द्वारा—

एक योग्य बालक के निर्माण की बुनियाद में माता-पिता का स्वयं धार्मिक व चरित्रवान् होना पहली शर्त है। यह वैज्ञानिक सत्य है कि गर्भस्थ शिशु पर माता की प्रत्येक चेष्टा और क्रिया की छाप पड़ती है। आज समूची मानवता ईर्ष्या, द्वेष, राग, वैमनस्य से ग्रस्त है। पुरानी पीढ़ी आज की नई पीढ़ी को उच्छृंखलता, दूषित चरित्र और विध्वंसात्मक प्रवृत्तियों के लिए कोसती है। किन्तु उसका उपचार नहीं हो पाता। महर्षि समूह मन को बहुत अच्छी तरह जानते थे। इसीलिए उन्होंने माता-पिता के मन की पवित्रता का निर्देश दिया है। आज के परिवारों में जहां पति-पत्नी के बीच गाली-गलौज और हाथापाई होती हो, उनकी सन्तानें अगर विश्वविद्यालयों और बसों, रेलों में आग लगाती हैं तो कौन दोषी होगा? बच्चे की प्रारम्भिक शिक्षा ही इस प्रकार की है। बच्चा शुरू में माता के गर्भ में और फिर गोद में पलता है। महर्षि ने उसके समुचित विकास के लिए अनेक उपाय सुझाए हैं। माता बालक को सुन्दर वाणी में बड़ों का आदर करने, छोटों के साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करने, लड़ाई-झगड़ों आदि से दूर रखकर अच्छी आदतें सिखावें।

इसके साथ ही उन्होंने बहुत दूरदर्शितापूर्ण एक अन्य बात लिखी है कि जब बालक-बालिका ५ वर्ष के हों तो उन्हें देवनागरी अक्षरों का अभ्यास शुरू करा देना चाहिए। स्पष्ट है ऐसा करने से शैक्षणिक असमानता तथा भाषा समस्या दोनों का एक साथ हल हो सकेगा।

बालक की मूल प्रवृत्तियों में आत्मरक्षा तथा भय भी होती हैं। साधारणत: माता-पिता बालक को अपनी बात मनवाने के लिए उसे भूत-प्रेत, हौआ आदि का नाम लेकर भयभीत करते हैं। इससे दो प्रकार के स्थायी प्रभाव उसके मस्तिष्क पर पड़ते हैं। पहला तो वह डरपोक बन जाता है। दूसरा ईश्वर के अतिरिक्त अनेकों अदृश्य शक्तियों में विश्वास रखने लगता है। इस का लाभ उठाकर कुछ पाखण्डी लोग स्वयं को सिद्ध पुरुष बताते हैं या किसी भूत-प्रेत को अपने अन्दर बुलाने का ढोंग रचते हैं। जन-साधारण अज्ञान के कारण शारीरिक या मानसिक रोगों के इलाज के लिए इनके चक्कर काटते और भयंकर हानियां उठाते हैं। इसी तरह दूसरा चक्कर फलित ज्योतिष का है। माता-पिता के मन में अपने बालक के सुखद भविष्य की आकांक्षा तो रहती ही है, अत: वे बालक के जन्म के तुरन्त बाद ज्योतिषियों के चक्कर काटते व जन्मकुण्डलियां बनवाते फिरते हैं। तात्पर्य यह कि परोक्ष रूप से उसे भी ग्रह नक्षत्रों व भाग्यवाद के झमेले में उलझा देते हैं। महर्षि ने इन सबका बहुत प्रभावी ढंग से खण्डन किया है। अत: माता-पिता को चाहिए कि वे बालक को अज्ञान के अन्धकार में न जाने दें और आवश्यकता पड़ने पर उसकी

Scanned with CamScanner

गलतियों के लिए दण्डित भी करें।

आचार्य द्वारा—

बालक जिसके द्वारा आचार (अच्छी प्रवृत्तियां) सीखता है उसे आचार्य कहते हैं। आचार्य को अभिमान-शून्य तथा ज्ञान से परिपूर्ण होना आवश्यक है। आधुनिक चिन्तन में आजकल विद्यालय रहित शिक्षा का सिद्धान्त तेजी से चर्चित हुआ है। यह शिक्षक के अहं तथा अपनी बात को जबरदस्ती छात्रों के ऊपर थोपने की प्रतिक्रिया में उपजा सिद्धान्त है। बालक बहुत जिज्ञासु होता है। उसकी जिज्ञासाओं का समाधान भी बहुत सहजता भरी पद्धति से होना चाहिए और यह तभी सम्भव होगा जब शिक्षक अपने व्यक्तित्व तथा ज्ञान को बालक के ऊपर थोपने की प्रवृत्ति से मुक्त होगा। इसीलिए महर्षि ने उसे अभिमान शून्य होने की शर्त रखी है। आचार्य को चाहिए कि वह जीवन और शिक्षण के समायोजन को कुशलता से चलावे, बालक के चरित्र के विकास के प्रति प्रयासरत रहे। वस्तुतः सत्यार्थ प्रकाश के आधार पर बालक का पालन कर धरती को स्वर्ग बनाया जा सकता है।

तृतीय समुल्लास : शिक्षा कैसी ? ३

शिक्षा बालक की अन्तर्निहित क्षमताओं तथा सार्वजनीन संस्कृति के विकास और परिमार्जन का सबसे बड़ा माध्यम है। किसी भी देश के उत्थान-पतन, उसके भविष्य में वहां की शिक्षा-पद्धति की सबसे बड़ी भूमिका रहती है।

इस समुल्लास में महर्षि ने वैदिक शिक्षा-पद्धति को सरलीकृत करके प्रस्तुत किया है, जिसमें समाहित निम्नलिखित विचार आज के चिन्तकों के लिए भी क्रान्तिकारी हैं।

(१) "अर्थ के सामाजिक अवमूल्यन" का गम्भीर सिद्धान्त इसमें निहित है, महर्षि ने स्पष्ट लिखा है कि सोने-चांदी के कीमती आभूषणों, वस्त्रों से देहाभिमान, विषयासक्ति तथा सुरक्षा का भय आदि जागृत होते हैं। आत्मा को सुशोभित करने के लिए तो गुण, विद्या, विनम्रता आदि आभूषण धारण कराना चाहिए।

(२) विकास के समान अवसर के विचार का व्यावहारिक प्रशिक्षण गुरु-कुलीय शिक्षा व्यवस्था में है। उन्होंने बहुत स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि "सब को तुल्य वस्त्र, खानपान, आसन दिए जाएं, चाहे वह राजकुमार व राजकुमारी हों, चाहे दरिद्र की सन्तान हों, सभी को तपस्वी होना चाहिए। इतना ही नहीं पारिवारिक स्थिति के कारण बालक के मन पर असमानता की कोई छाप न रहने पाए, इसके लिए उन्होंने अनिवार्य छात्रावास की कड़ी व्यवस्था दी।

Scanned with CamScanner

इसमें राज नियम व जाति नियम होना चाहिए कि पांचवें अथवा आठवें वर्ष से आगे कोई अपने लड़के और लड़कियों को घर में न रख सकें और उनके माता-पिता अपने सन्तानों व सन्तानें अपने माता-पिताओं से न मिल सकें न किसी प्रकार का पत्र-व्यवहार एक दूसरे से कर सकें।"

(३) उद्देश्यपरक शिक्षा—शिक्षा की भूमिका में दीक्षा (अर्थात् उद्देश्य निर्धारण का संकल्प) की व्यवस्था की गई है। बालक के गुण, कर्म, स्वभावानुसार उसका उद्देश्य तथा मार्ग निर्धारित किया जाना चाहिए।

(४) शिक्षा का व्यावहारिक स्वरूप—यह शिक्षा आश्रम व्यवस्था के अन्तर्गत ब्रह्मचर्य आश्रम (जीवन की प्रारम्भिक २५ वर्षों तक) पूरी होती है। इसमें ज्ञान व कौशल के अतिरिक्त बालक जीवन की गम्भीर चुनौतियों का सामना करने के लिए समर्थ तथा धर्म व ईश्वर परायण बनता है। इस अवधि में उसे ब्रह्मयज्ञ (संध्या) तथा देवयज्ञ करने (अग्निहोत्र) का विधान है।

(५) सहकारिता की भावना का विकास—गुरुकुल में प्रत्येक कार्य सभी मिलजुल कर करते हैं। प्रातः, सायं, संध्या व अग्निहोत्र होता है। इससे पारस्परिक सहयोग की भावना विकसित होती है, जो समाज निर्माण का बुनियादी आधार है।

(६) समाज में नारी को यथोचित स्थान मिलने के लिए बालिकाओं को शिक्षित होना अनिवार्य है। महर्षि ने सबसे पहले इतने प्रभावी ढंग से नारी तथा शूद्र को पढ़ने का अधिकार देने की वकालत की।

(७) सहशिक्षा का विरोध - महर्षि जो बहुत बड़े मनोद्रष्टा थे। आज कल की फैशन परस्ती व होड़, चरित्र के पतन, कामुकता भरे वातावरण के लिए सहशिक्षा का बड़ा दोष है। सौ साल पहले ही उन्होंने सहशिक्षा का तीव्र विरोध किया ताकि युवावस्था में मूल प्रवृत्ति के तीव्रतर होने के बजाय उसका सन्मार्गीकरण किया जा सके।

(८) स्वामीजी ने अध्यापन किए जाने वाले विषयों के लिए पांच कसौटियां रखीं।

एक जो-जो ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव और वेदों के अनुकूल हो, वह-वह सत्य और उसके विरुद्ध असत्य है।

दो—जो-जो सृष्टिक्रम के अनुकूल हो वह-वह सत्य और जो जो सृष्टिक्रम से विरुद्ध है वह सब असत्य है। जैसे कोई कहे कि बिना माता-पिता के संयोग के लड़का उत्पन्न हुआ।

तीन—'आप्त' अर्थात् जो धार्मिक विद्वान्, सत्यवादी, निष्कपटियों का संग उपदेश के अनुकूल है वह-वह ग्राह्य और जो-जो विरुद्ध है वह अग्राह्य है।

Scanned with CamScanner

चार —अपने आत्मा की पवित्रता विद्या के अनुकूल अर्थात् जैसी अपने को सुख प्रिय और दुःख अप्रिय है, वैसे ही सर्वत्र समझ लेना कि मैं भी किसी को दुःख वा सुख दूंगा तो वह भी अप्रसन्न और प्रसन्न होगा और

पांच—जो-जो निम्न आठों प्रमाणों के अनुकूल है वह ग्राह्य तथा जो प्रतिकूल है वह अग्राह्य है :—

(अ) प्रत्यक्ष —जो इन्द्रियों और विषयों से सम्बन्धित होने पर सत्य ज्ञान उत्पन्न होता है जैसे आंख से देखना आदि।

(ब) अनुमान—किसी पदार्थ के चिन्ह देखने पर पदार्थ का यथावत् ज्ञान होने का अनुमान। जैसे पुत्र को देखकर पिता का भान होना स्वाभाविक है।

(स) उपमान – तुलनात्मकता द्वारा उदाहरणार्थ जैसी ऋचा की गुड़िया है वैसी ही दिव्या की है। यह कहने पर ऋचा की गुड़िया देखने से दिव्या की गुड़िया का ज्ञान हो जाता है।

(घ) शब्द प्रमाण –जो सार्वभौमिक सिद्धान्त किसी पूर्ण विद्वान् सत्यवादी महापुरुष द्वारा बताया गया हो और जो वेद का उपदेश हो।

(च) ऐतिह्य—किसी के कार्यों और उसके जीवन चरित्र के इतिहास से प्राप्त ज्ञान।

(छ) अर्थापत्ति --जहां एक बात कहने से दूसरी बात का अर्थ समझ लिया जाए। जैसे "बादलों से वर्षा होती है" यह कहने से "बगैर बादल के वर्षा नहीं होती" यह जाना जा सकता है।

(ज) सम्भव—जो बातें सृष्टिक्रम के अनुकूल हों। जैसे कोई कहे कि "आग गर्म" है तो बात सम्भव है किन्तु कोई कहे कि आग ठण्डी है तो बात असम्भव होगी।

(झ) अभाव—जैसे मैं कहूं कि 'वेद पढ़िए' तब पाठक जहां वेद मिल सकें वहां से प्राप्त करके पढ़ें।

उपरोक्त पांच परीक्षाओं द्वारा सत्यासत्य का परीक्षण किया जा सकता है।

शिक्षण काल में विद्यार्थियों को निर्देश—

शिक्षणकाल में ब्रह्मचर्य आश्रम ही वह समय है जिसमें कोई व्यक्ति इतना शारीरिक, मानसिक और आत्मिक विकास कर सके कि वह व्यक्तिगत जीवन में सुखी रहकर समाजोपयोगी भूमिका निभा सके। इस दृष्टि से स्वामी जी ने निम्न निर्देश प्रशिक्षण सूत्रों की तरह लिखे हैं—

Scanned with CamScanner

१. ब्रह्मचारी---मन, वचन, कर्म से असत्य का त्याग करे।

२. अस्तेय—ब्रह्मचर्य (उपस्थेन्द्रिय का संयम) अपरिग्रह, शौच (शरीर व मन की पवित्रता), तप (कष्ट सहकर भी धर्मयुक्त कर्म करते रहना), सन्तोष स्वाध्याय (पढ़ना-पढ़ाना) और ईश्वर प्रणिधान (ईश्वर भक्ति में मन लगाना) का पालन करना चाहिए।

३. कुसंग का त्याग, मद्य, धूम्रपान आदि का निषेध करना।

४. पच्चीसवें वर्ष से पूर्व पुरुष को तथा सोलह वर्ष से पूर्व कन्या को विवाह नहीं करना चाहिए।

५. आलस्य, अतिभोजन, अति जागरण का त्याग करना।

६. धन की इच्छा आकांक्षामुक्त रहकर सारा ध्यान अध्ययन में लगाना।

चतुर्थ समुल्लास : विवाह कैसे ?

४

आयुक्रम के अनुसार ब्रह्मचर्याश्रम के बाद व्यक्ति अपने गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता है। अतः इस समुल्लास में स्वामी जी ने विवाह तथा गृहस्थाश्रम पर विस्तृत प्रकाश डाला है।

वर्तमान समय में विवाह संस्था ही इतनी सड़ चुकी है कि उसका वास्तविक उद्देश्य समाप्तप्राय हो गया है। इसके निम्नलिखित में से ही कुछ प्रमुख कारण हैं—

१. गुण, कर्म, स्वभाव में परस्पर समानता का अभाव।

२. लड़के अथवा लड़की की इच्छा से परे माता-पिता की इच्छा से विवाह।

३. विवाह के साथ जुड़ी अनेकों कुप्रथाएं।

४. खर्च, आडम्बर और दिखावे का प्रभाव।

५. समाज व परिवार में नारी का हेय स्थान।

६. जीवन के प्रति आध्यात्मिक दृष्टिकोण का अभाव।

७. विवाह को संस्कार के बजाय परम्परा मानना।

८. भावावेश के कारण हुआ विवाह जिसमें शारीरिक आकर्षण अन्य कारणों से पैदा हुआ मोह प्रमुख रहता है।

महर्षि दयानन्द ने इन सभी कारणों के समूल निवारण वाली वैदिक विवाह-पद्धति की व्याख्या दी है।

Scanned with CamScanner

(१) विवाह का समय —सोलह वर्ष से लेकर चौबीस वर्ष तक कन्या का तथा पच्चीसवें वर्ष के बाद पुरुष का विवाह करना चाहिए। भारत की जलवायु में युवक का पूर्ण शारीरिक विकास २५ वर्ष की आयु तक ही हो पाता है जबकि कन्या का १६ वर्ष से पहले नहीं। अपरिपक्व आयु में विवाह होने से अनेक परेशानियां आ पड़ती हैं जिनका सामना करना कठिन होता है।

(२) विवाह किसके अधीन ?—इस सन्दर्भ में महर्षि दयानन्द का चिन्तन किसी भी अधुनातन समाजशास्त्री विचारक से कम क्रान्तिकारी नहीं है। उन्होंने बहुत प्रखर शब्दों में लिखा कि विवाह लड़की-लड़के के अधीन होना चाहिए, माता-पिता के नहीं। क्योंकि विवाह का मुख्य प्रयोजन ही वर तथा कन्या से है। किन्तु इस विवाह में कन्या तथा वर के आचार्यों की अनुमति होनी चाहिए। यथासम्भव वे ही समान गुण, कर्म, स्वभाव के वर-कन्या की खोज करके विवाह निश्चित करें। असमान गुण, कर्मादि वालों से विवाह होने की अपेक्षा तो मरण पर्यन्त कुंआरे रहने को महर्षि ने उचित ठहराया है।

(३) महर्षि ने दूर के विवाह को श्रेष्ठ तथा निकट को दोषपूर्ण बताते हुए निम्न तर्क दिए हैं—

(अ) जो बाल्यावस्था से निकट रहते हुए एक दूसरे के दोष तथा परस्पर विपरीत स्वभाव को जानते हैं उनमें प्रेम नहीं रह सकता।

(ब) जैसे कोई एक जगह रोगी है तो दूरस्थ देश में जलवायु बदलने से रोगमुक्त हो सकता है।

(स) यह स्वाभाविक है कि दूरस्थ होने से परिवारों का प्रेम सुदृढ़ बना रहता है।

(द) निकट होने से पत्नी का ध्यान अपने पितृकुल की तरफ बंटा रहने से परिवार में तनाव उत्पन्न हो सकता है।

(४) विवाहों के प्रकार —विवाह के आठ प्रकार गिनाए गए हैं।

१. ब्राह्म —ब्रह्मचर्य से युक्त समान गुण धर्माओं का पारस्परिक सहमति से हुआ विवाह।

२. दैव—समारोह पूर्वक अलंकारयुक्त कन्या का वर से विवाह करना।

३. आर्ष—लेन-देन के बगैर दोनों कुलों की प्रसन्नता से हुआ विवाह।

४. प्राजापत्य —धर्म की वृद्धि के लिए दोनों का विवाह।

५. आसुर—वर और कन्या को कुछ देकर हुआ विवाह।

Scanned with CamScanner

६. गान्धर्व – समय और सामाजिक नियम से अलग वर-कन्या का इच्छा-पूर्वक परस्पर संयोग।

७. राक्षस – लड़ाई अथवा बलपूर्वक छीन-झपट कर कन्या से विवाह कर लेना।

८. पैशाच—सोती हुई, नशे में अथवा पागल कन्या से बलात्कार करना।

इसमें पहला प्रकार सर्वश्रेष्ठ है। प्रारम्भिक चार प्रकारों में से कोई किया जा सकता है।

वर्ण व्यवस्था—गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने के बाद व्यक्ति के निजी और सार्वजनिक उत्तरदायित्व बढ़ जाते हैं। इसके लिए वर्ण व्यवस्था दी गई है। इस समुल्लास में वर्ण व्यवस्था के बारे में निम्न बातें लिखी गई हैं—

१. वर्ण चार हैं – ब्राह्मण (शिक्षक), क्षत्रिय (रक्षक), वैश्य (पोषक) तथा शूद्र (सेवक)। जो पूर्णतः गुण, कर्म तथा स्वभाव पर आधारित होते हैं, जन्म से नहीं।

२. क्षत्रिय अथवा ब्राह्मण का बालक शूद्र बन सकता है और शूद्र का बालक ब्राह्मण बन सकता है।

३. समाज व्यवस्था में सभी का समान महत्त्व है। कोई किसी से हेय नहीं।

४. ब्राह्मण (शिक्षक) का कार्य पढ़ना-पढ़ाना, यज्ञ करना-कराना तथा दान लेना व देना छः कर्म हैं। वह अर्थ की चिन्ता से मुक्त और समाज का नीति-नियामक बौद्धिक वर्ग है।

५. क्षत्रिय मानव सुलभ दुर्बलताओं के कारण समाज में उत्पन्न शोषण, अन्याय व अत्याचार से मुक्ति दिलाने तथा आसुरी व हिंसक शक्तियों को दंडित करने वाला शारीरिक दृष्टि से शक्ति सम्पन्न वर्ग है है।

६. वैश्य – कृषि तथा औद्योगिक उत्पादन द्वारा जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति एवं अर्थ-व्यवस्थाओं को नियन्त्रित रखने वाला वर्ग।

७. शूद्र – उपरोक्त तीनों कार्य करने में अक्षम होने पर प्रीतिपूर्वक जनता की सेवा कार्य करने वाला वर्ग है।

८. गुण कर्मानुसार वर्णव्यवस्था से सामाजिक व्यवस्था में गतिशीलता बनी रहती है। अपनी योग्यतानुसार कार्य करने का समान अवसर मिलता है तथा निरन्तर उन्नति करने की स्वस्थ प्रतिस्पर्धा बनी रहती है।

पंच महायज्ञ—यज्ञ को वेद में श्रेष्ठतम कार्य की संज्ञा दी है। गृहस्थ का सदाचारी ईश्वर परायण रहना सुखी परिवार का महत्त्वपूर्ण आधार है। अतः उसे निम्न पांच यज्ञ करने चाहिएं—

Scanned with CamScanner

१. ब्रह्मयज्ञ –संध्योपासना तथा वेदादि शास्त्रों का स्वाध्याय ।

२. देवयज्ञ—अग्निहोत्र, विद्वानों का संग आदि ।

३. पितृयज्ञ –माता-पिता, विद्वान्, गुरु की सेवा करना ।

४. बलिवैश्वदेव यज्ञ—भोजन से पूर्व कुछ अंश कुत्ते, भूखे व्यक्ति, रोगी कौवे आदि को देना ।

५. अतिथि यज्ञ –किसी धार्मिक, सत्योपदेशक, संन्यासी आदि की यथोचित सेवा करना ।

इस प्रकार इस समुल्लास में स्वामी जी ने गृहस्थ जीवन के लिए विस्तृत मार्ग दर्शन दिया है ।

पंचम समुल्लास : वानप्रस्थाश्रम व संन्यासाश्रम ५

वानप्रस्थ—

(१) आयु के पचासवें वर्ष से पछत्तरवें वर्ष तक का समय इस आश्रम के लिए है ।

(२) गृहस्थाश्रम पूर्ण करने की आयु तक व्यक्ति अपने अनुभवों में परिपक्व हो चुकता है । अतः उसे परिवार के सीमित दायरों, उसके दायित्व तथा जीवन-यापन की चिन्ताओं से मुक्त होकर अपने अनुभवों का लाभ समाज को पहुंचाना चाहिए ।

(३) यह आवश्यक ही है कि पुराने लोगो के स्थान रिक्त हों ताकि नई पीढ़ियों को अपनी प्रतिभा का उपयोग तथा विकास करने का अवसर मिल सके ।

(४) इसमें व्यक्ति शहरी जीवन छोड़कर योगाभ्यास, स्वाध्याय व साधना के उद्देश्य से अन्यत्र जाकर रहे । जीविकापार्जन के लिए कोई कार्य न करें । ब्रह्मचर्याश्रम जैसी सादगी व संयम बरते ।

संन्यासाश्रम—

वानप्रस्थ के पश्चात् संन्यास आश्रम का विधान है। किन्तु जो व्यक्ति इससे पूर्व ही जितेन्द्रिय, संसारिक कामनाओं, वासनाओं से रहित होकर मन में वैराग्य उत्पन्न कर सके, वह ब्रह्मचर्य अथवा गृहस्थाश्रम के बाद भी संन्यासी हो सकता है ।

Scanned with CamScanner

काषाय वस्त्र पहनकर, सिर मुंडाकर और दण्ड-कमण्डल धारण कर लेने भर से कोई संन्यासी नही माना जा सकता जब तक कि वह लोकैषणा, पुत्रैषणा और वित्तैषणा से पूरी तरह मुक्त न हो। परोपकार, सत्य, प्रेम, अनासक्ति, ज्ञान आदि सद्गुणों का प्रतीक संन्यासी होता है। वह पूर्णकालिक सामाजिक व्यक्ति है, जिसका परिवार समूचा विश्व होता है। उसका कार्य ही समाज के अन्दर की सभी प्रकार की बुराइयों से संघर्ष तथा जन सामान्य को अविद्यादि से मुक्त कराना है। वेद, शास्त्र, ईश्वर, धर्म के प्रति लोगों को आस्थावान् बनाना है।

इस प्रकरण में स्वामी जी ने आजकल के पाखण्डी और धूर्त संन्यासी नाम-धारियों की भी अच्छी खबर ली है। उन्होंने स्पष्ट लिखा है कि ये लोग गुरुडम तथा पाखण्ड फैलाकर अपनी जेबें भरते हुए समाज को अविद्या के अन्धकार में धकेलते हैं अत: इनका तीव्र विरोध होना चाहिए।

जो लोग यह कहते हैं कि संन्यासी तो संसार से अलग है उसे तो जंगल में जाकर तपस्या करनी चाहिए वे बड़ी बेबुनियाद बात करते हैं। ज्ञान, सत्य, आत्मोत्थान के उपदेश की आवश्यकता, विषय-वासना के मोह पाश में फंसे संसारियों को होती है अथवा पेड़ों और पत्थरों को ? एक पवित्रात्मा जिसमें समाज को बहुत कुछ दे सकने की क्षमता है, उसका सही उपयोग संसार को कार्यक्षेत्र बनाने से ही होगा। पलायन अथवा स्वार्थ (केवल निजी उन्नति की इच्छा) के लिए उसे जंगलों में नहीं भागना चाहिए। इतना अवश्य है संन्यासी संसार में रहे किन्तु संन्यासी में संसार न रहे।

षष्ठ समुल्लास : राज्य व्यवस्था

६

आज मानव समाज व्यवस्था में दो बड़े दोष हैं—एक सत्ता का केन्द्रीकरण और दूसरा सम्पत्ति का केन्द्रीकरण। जिस राष्ट्र मे सत्ता का केन्द्रीकरण एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के हाथों में हो जाता है, वहां जनता गौण हो जाती है और राज्य शासन अपनी मनमानी करने लगता है। व्यक्तिगत स्वतन्त्रता वहां कोई अर्थ नहीं रखती और जनता की अस्मिता चन्द तानाशाहों के हाथ कैद होती है।

दूसरी ओर जहां सम्पत्ति का केन्द्रीकरण कुछ लोगों के पास हो जाता है वहां गहरी आर्थिक विषमता उत्पन्न हो जाती है। परिश्रम करने वाला भूखों मरता है और धनवान् बगैर श्रम के ही भोग-विलास में लिप्त हो जाता है। समाज में सम्पत्ति का मूल्य इतना अधिक हो जाता है कि बजाय विद्वान् के धनवान् वर्ग राज्य को नियन्त्रित करने लगता है। यहीं से राजनैतिक भ्रष्टाचार शुरू होता है। जनता के कथित प्रतिनिधि भी मौज-मस्ती मनाने एवं अधिक-

Scanned with CamScanner

तम शासकीय धन का अपव्यय करते हैं।

अतः उचित है कि ऐसा राज्य ही आदर्श समझा जाएगा जो लोकतन्त्र तथा समानता के सिद्धान्त को साथ लेकर चलेगा और यह तभी सम्भव है जब राजनीति करने वाला वर्ग धन से नहीं, धर्म से संचालित होगा। महर्षि दयानन्द ने इस समुल्लास में ऐसे ही राज्य की रूपरेखा प्रस्तुत की है जिसमें गहरे क्रांतिकारी सूत्र समाहित हैं।

राज्य व्यवस्था का स्वरूप—

(१) राजा का चुनाव—इस व्यवस्था में राजा जनता का निर्वाचित प्रतिनिधि होगा और अयोग्य सिद्ध होने पर बहुमत के आधार पर प्रजा उसे हटा भी सकती है।

(२) राष्ट्र की तीन सभाएं—निर्वाचित राज तथा जनता दोनों मिल कर राज्य संचालन के लिए तीन सभाएं बनाएं। (१) विद्यार्य सभा, (२) धर्मार्य सभा, (३) राजार्य सभा। नामों के आधार पर ही इनके कार्य भी बंटे रहते हैं। राजा को कोई स्वच्छन्द निर्णय लेने का अधिकार नहीं है। वह इन सभाओं का सभापति होता है और इन्हीं की सम्मति से कार्य करता है।

(४) सभा का स्वरूप—दस विद्वानों की सभा नि नानुसार हों—

(अ) चार विद्वान्—चारों वेदों के ज्ञाता।

(ब) न्याय शास्त्र का ज्ञाता—एक।

(स) निरुक्त का ज्ञाता—एक।

(द) धर्म शास्त्र का वेत्ता—एक।

(इ) ब्रह्मचारियों का प्रतिनिधि - एक।

(क) गृहस्थों का एक प्रतिनिधि।

(ख) वानप्रस्थियों का एक प्रतिनिधि।

(५) मन्त्रिमण्डल—राज्य के विभिन्न कार्यों को सुचारु रूप से चलाने में राजा अपनी सहायता करने वाले सात या आठ मन्त्रियों की नियुक्ति करे।

(६) संविधान निर्माण—यह कार्य उपरोक्त तीनों सभाएं और सभापति (राजा) मिलकर करें।

(७) राजा, राजसभाओं और प्रजा का परस्पर सम्बन्ध—सत्ता का केन्द्रीकरण किसी व्यक्ति के हाथों में न होने पाए इस दृष्टि से राजा के अधीन सभाएं तथा सभाओं के अधीन राजा रहे। इसी तरह राजा और सभाएं प्रजा के अधीन तथा प्रजा सभा के अधीन रहे। महर्षि ने स्पष्ट लिखा

Scanned with CamScanner

है कि यदि राजा और राजवर्ग पर प्रजा का अंकुश न रहे—वे स्वाधीन और स्वतन्त्र रहें तो प्रजा का नाश कर देते हैं। प्रजा के पास चुने हुए प्रतिनिधि (राजा) को वापस बुलाने का संवैधानिक अधिकार भी है।

(८) राजदूत—महर्षि ने लिखा है कि अत्यन्त बुद्धिमान् दूरद्रष्टा, राजनीति का ज्ञाता, प्रगाढ़ देशभक्त, देशकाल परिस्थिति के अनुसार शीघ्र निर्णय लेने वाला, निडर और कुशल वक्ता 'दूत' की तरह नियुक्त किया जाए।

(९) रक्षा व्यवस्था—(अ) सेना आधुनिकतम सभी प्रकार के शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित रहे।

(ब) युद्ध तभी किया जाए जब राष्ट्र के लिए शान्तिपूर्ण उपायों से हल न हो सकने वाला खतरा उत्पन्न हो।

(स) सुव्यवस्थित सैनिक विद्यालय होना चाहिए।

(द) राजा सेनाध्यक्षों से नियमित भेंट किया करे।

(इ) युद्ध बन्दियों के साथ मानवतापूर्ण व्यवहार होना चाहिए। उन्हें शारीरिक, मानसिक किसी भी प्रकार की क्षति न पहुंचावें।

(क) पराजित राजा के साथ सदव्यवहार रखें, किन्तु बन्दीगृह में भी उसके प्रति अत्यन्त सचेत रहें।

(ख) युद्ध में कूटनीति का प्रयोग अधर्म नहीं है।

(१०) अर्थ व्यवस्था—अलग-अलग प्रकार के व्यवसायों पर उनके लाभानुपात में कर निर्धारण किया जाय। इसी कर से राज्य-व्यवस्था चले।

इस शासकीय धन के उतने ही अश का राजा उपयोग कर सकता है, जितना कि सभा उसके लिए निर्धारित करे—उससे अधिक कदापि नहीं।

नदी तथा समुद्री मार्ग पर भी कर लगाया जाय।

राजा और सभासदों के लिए अनिवार्य गुण—

महाविद्वानों को विद्या सभा का अधिकारी, धार्मिक विद्वानों को धर्मार्य सभा का अधिकारी तथा राजनीति के विद्वान् धार्मिक पुरुषों को राजार्य सभा का अधिकारी बनाया जाना चाहिए।

सभी सभासदों और सभापति को सादा जीवन बिताना चाहिए। उनके खर्चों पर शासकीय नियंत्रण हो। उन्हें न्याय परायण तथा विद्वान् होना अनिवार्य है। संयमी सदाचारी और इन्द्रियजित् भी होना चाहिए। सभासद् और राजा सभी जन-साधारण के प्रति संवेदनशील होने चाहिएं ताकि राजा की नीतियां जनाभिमुख हों।

Scanned with CamScanner

सप्तम समुल्लास : ईश्वर से कैसे मिलें ?

मनुष्य के लिए ईश्वर की कल्पना सदैव से एक दुरुह पहेली रही है। अपने ज्ञान की सीमाओं के अन्दर विभिन्न कल्पनाएं की गई हैं। परस्पर विरोधी अनेकों अवधारणाओं ने ईश्वर सम्बन्धी ज्ञान को इतना विकृत कर दिया है कि ईश्वर के अस्तित्व पर ही प्रश्न उठने लगे।

स्वामी जी ने ईश्वर के सम्बन्ध में अत्यन्त वैज्ञानिक विचार इस समुल्लास में दिए हैं।

ईश्वर सिद्धि—

१. कोई भी रचना उसके रचयिता का बोध कराती है अतः सृष्टि देखने से उसके रचयिता का ज्ञान प्रत्यक्ष है।

२. जब मनुष्य कोई बुरा कार्य करता है तो भले ही क्षण भर को सही उसकी आत्मा में लज्जा, भय या संकोच का भाव आता है जबकि किसी भले कार्य से आनन्द का भाव आता है।

३. जीवात्मा शुद्ध होकर परमात्मा का ध्यान करे तो आत्मा और परमात्मा दोनों प्रत्यक्ष होते हैं।

ईश्वर का स्वरूप—

१. ईश्वर, दिव्य, गुण, कर्म, स्वभाव युक्त है। वह सर्व व्यापक है। न तो जन्म लेता है और न ही उसकी मृत्यु होती है। वह जगत् का आदिमूल है। वही निर्माता, नियन्त्रक तथा संहारक है।

२. वह कर्मफल का दाता है और सर्व व्यापक है।

३. वह न्यायकारी और दयालु है। सतही तौर पर परस्पर विरोधी लगने वाले शब्द न्याय और दया अन्ततोगत्वा परस्पर पूरक ही हैं। किसी अपराधी को दण्ड देना दया ही है। अन्यथा वह अपराधी और भी बड़े अपराध करेगा जो उसके विनाश का कारण बन सकते हैं। दूसरी बात यह कि एक अपराधी को बन्दी बनाने से अपराध पर नियन्त्रण होकर अनेकों लोगों को लाभ पहुंचे तो यह दया ही होगी।

४. वह सत् + चित + आनन्द स्वरूप है। वही शुद्ध, बुद्ध, मुक्त व पवित्र है।

५. ईश्वर को निराकार सिद्ध करते हुए स्वामी जी ने निम्न तर्क दिए हैं—

(अ) सर्व व्यापक वस्तु साकार नहीं हो सकती। साकार वस्तु के गुण, कर्म, स्वभाव भी सीमित होते हैं।

Scanned with CamScanner

(ब) साकार प्रभु रोग, भूख-राग-द्वेष से रहित नहीं हो सकता।

(स) अगर वह आकारयुक्त है तो उसके अवयवों को बनाने-जोड़ने वाली कोई अन्य निराकार सत्ता अवश्य होनी चाहिए।

(द) अगर कहा जाए कि ईश्वर ने स्वेच्छा से शरीर बना लिया तो मतलब यह कि उससे पूर्व वह निराकार था।

६. वेद में ईश्वर को अजन्मा कहा गया है, वह सर्वव्यापक है, फिर एक गर्भ में स्थित होकर जन्म कैसे लेगा ?

७. ईश्वर किसी के पापों के लिए क्षमा नहीं करता भले ही उसकी कितनी भी प्रार्थना की जाए, वह न्यायकारी है।

स्तुति-प्राथना-उपासना

स्तुति— ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव का वर्णन करना स्तुति है। इससे ईश्वर प्रसन्न हाकर पाप क्षमा नहीं करता अपितु यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि जिस व्यक्ति या वस्तु के गुणों-कार्यों के बारे में हम बात करते हैं या चिन्तन करते हैं उसके अनुरूप स्वयं स्वत: ही ढलने लगते हैं।

प्रार्थना—प्रार्थना में ईश्वर से बुद्धि, बल, पराक्रम, सद्विचार, शुभ-संकल्प आदि माँगे जाते हैं। जो वस्तु ईश्वर से मांगी जाती है हमारी मानसिक शक्तियां उसी पर केन्द्रित होती हैं और हम स्वयं ही उसकी प्राप्ति का प्रयास करने लगते हैं।

उपासना— इसका शाब्दिक अर्थ ही "समीप जाना" होता है। ऐसे शुभ कार्य जिससे परमात्मा की निकटता की अनुभूति हो, उपासना कहलाती है।

तृतीय समुल्लास में वर्णित दसों नियम-यम भी उपासना विधि में आते हैं।

जीव और ईश्वर

(१) जीव में इच्छा, द्वेष, प्रत्यत्न आदि गुण हैं—वह चेतन है।

(२) वह अपने कर्मों के लिए स्वतन्त्र तथा फल भोगने के लिए ईश्वरीय व्यवस्था के आधीन है। शरीर, प्राण, इन्द्रियों और अन्त:करण जीव के आधीन हैं।

(३) जीव सीमित तथा अल्पज्ञ है।

(४) जीव कभी विद्यायुक्त तथा कभी अविद्यायुक्त हो सकता है।

(५) ईश्वर और जीव में व्याप्य-व्यापक का सम्बन्ध है, चूंकि जीव

Scanned with CamScanner

अपेक्षाकृत स्थूल है और परमेश्वर सूक्ष्म इसलिए वह जीव में निवास करता है।

(६) ईश्वर और जीव का पृथक् अस्तित्व है —क्योंकि उनके गुण, कर्म एक नहीं हैं।

वेद

यह मानना अवैज्ञानिक है कि मनुष्य धीरे-धीरे अपने ज्ञान का विकास करके उसे संकलित रूप दे सकता है और वेद के साथ भी यही हुआ है।

मनुष्य का ज्ञान स्वाभाविक नहीं किन्तु नैमित्तिक है, अगर किसी व्यक्ति को अक्षर ज्ञान से सर्वथा दूर रखा जाए तो वह कुछ भी नहीं जान-समझ सकता। उसे किसी शिक्षक अथवा गुरु की आवश्यकता बनी ही रहती है। आज भी अनेकों जातियों-जनजातियों के लोग बगैर ज्ञान के पशुतुल्य बने हुए हैं।

इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए ईश्वर ने वेद के रूप में मनुष्य को सत्य ज्ञान दिया है। स्वामी जी ने वेद को ईश्वरकृत बताने को निम्न तर्क दिए हैं :—

१. वेद का समस्त ज्ञान ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव के अनुरूप है।

२. प्रत्याक्षादि प्रमाण विषयों से अविरुद्ध व शुद्धात्मा के स्वभाव के विरुद्ध नहीं हैं।

३. जैसा ईश्वर का निर्भ्रम ज्ञान है वैसा ही वेद में है।

४. सृष्टि क्रम के अनुरूप ज्ञान है।

५. वेद का ज्ञान सार्वभौमिक, सार्वकालिक और अनन्त है अतः वह भी ईश्वर की तरह नित्य है।

सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा ने 'अग्नि' नामक ऋषि के हृदय में ऋग्वेद 'वायु' ऋषि के हृदय में यजुर्वेद, 'आदित्य' के हृदय में सामवेद तथा 'अंगिरा' ऋषि के हृदय में अथर्ववेद का प्रकाश किया। क्योंकि ये ही चार ऋषि जीवों में सर्वाधिक पवित्रात्मा थे। ये मन्त्रकर्त्ता नहीं अपितु मन्त्रदृष्टा थे।

इसलिए स्वामी जी ने वेद के पढ़ने-पढ़ाने और सुनने-सुनाने को परम धर्म बताया है।

अष्टम् समुल्लास : सृष्टि निर्माण

इस समुल्लास में स्वामी जी ने सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय का

Scanned with CamScanner

अत्यन्त गम्भीर तथा दार्शनिक विवेचन किया है।

सृष्टि की उत्पत्ति सम्बन्धी विचार

१. सृष्टि की उत्पत्ति का प्रयोजन—ईश्वर में संसार की रचना तथा नियन्त्रण का जो सामर्थ्य है उसका प्रयोजन जगत् की उत्पत्ति के लिए है। परमेश्वर के अन्य गुण कर्मों की सार्थकता की सिद्धि जगत् के होने पर आधारित है। जीवात्मा द्वारा प्रलय से पूर्व किए गए पाप-पुण्यों का फल भी नवीन सृष्टि की रचना द्वारा ही सम्भव है।

२. सृष्टि की उत्पत्ति से पूर्व यह जगत् अन्धकार से युक्त था। पृथ्वी, सूर्यादि ग्रह नक्षत्र कुछ भी नहीं थे।

३- तीन पदार्थ अनादि हैं, जो तब भी थे। पहला ईश्वर, दूसरा जीव एवं तीसरा प्रकृति। ईश्वर चेतन तथा सर्वज्ञ. जीवात्मा भी चेतन किन्तु अल्पज्ञ तथा प्रकृति जड़ होते हुए कारण रूप से रहती है।

४. बिना कारण के कोई कार्य नहीं होता। जगत् की उत्पत्ति के तीन कारण हैं :—

(अ) निमित्त कारण—निमित्त कारण उसको कहते हैं जिसे बनाने से ही कुछ बने अन्यथा नहीं। सृष्टि निर्माण में मुख्य निमित्त कारण ईश्वर तथा गौण निमित्त कारण जीव हैं।

(ब) उपादान कारण—उत्पादन कारण वह है जिसके बिना कुछ न बने अर्थात् इसी का रूपान्तरण करके कुछ बनाया जाये। सृष्टि का उपादान कारण प्रकृति है।

(स) साधारण कारण—जिस साधन से किसी वस्तु की रचना की जाए, अर्थात् ज्ञान, दर्शन, बल, हाथ आदि और दिशा काल, आकाश आदि।

५. निराकार ईश्वर से ही जगत् की उत्पत्ति सम्भव हो सकती है। यदि परमात्मा साकार होता तो त्रसरेणु, ऊष्म, परमाणु और प्रकृति पर कैसे नियन्त्रण करता? ईश्वर प्रकृति से अत्यन्त सूक्ष्म है अतः उसमें व्याप्त होकर उसका निर्माण करता है।

६. प्रलय की समाप्ति पर ईश्वर ने ईक्षण (ज्ञान, तप, प्रेरणा) के द्वारा प्रकृति से इस सृष्टि का निर्माण किया। उपादान का कारण सूक्ष्म परमाणु होते हैं।

७. सृष्टि की उत्पत्ति के प्रारम्भ में पृथ्वी, वनस्पति आदि, इसके बाद ही स्त्री और पुरुष उत्पन्न हुए। ये युवा थे क्योंकि बालकों से पालन-

Scanned with CamScanner

पोषण को तथा वृद्धों से संतानोत्पत्ति की समस्या उठ खड़ी होती, आरम्भ में अमैथुनी सृष्टि ही उत्पन्न की गई थी।

८. जीवात्माओं के पूर्व कर्मानुसार ही उन्हें भिन्न योनियाँ—मानव, पशु, पक्षी आदि प्राप्त हुयीं।

९. मानव जीवन की उत्पत्ति त्रिविष्टप अर्थात् तिब्बत में हुई। (स्मरणीय है वर्तमान जीव वैज्ञानिक तथा पुरातत्वानयेयक्ष कर्ताओं ने तिब्बत के भौगोलिक वातावरण को ही जीवन की उत्पत्ति के लिए सर्वाधिक उपयुक्त पाया है।

१०. वर्तमान सृष्टि एक अरब छियानवे करोड़ आठ लाख तिरेपन हजार नवासी वर्ष हो गए हैं।

११. रात और दिन की तरह प्रलय व सृष्टि का क्रम प्रवाह से अनादि है।

आर्यों का जन्म स्थान

परतंत्रता के युग में भारतवासियों के मन से राष्ट्रभक्ति को कम करने के उद्देश्य से अंग्रेजों ने बड़ी तेजी से यह प्रचार किया कि आर्य भारत में भारत से आए हैं। इसके पीछे उनका दूसरा षड़यन्त्र यह भी था कि आर्य और द्रविणों के बीच झगड़ा खड़ा करके उत्तर-दक्षिण के बीच खाई पैदा कर दें। उस समय भारतीय इतिहासकार भारत की मूल्यगत महानता से, वैदिक दृष्टि से आस्थावान् नहीं थे। महर्षि दयानन्द वह पहला देशभक्त था जिसने भारतीय आत्मा को अपनी आवाज और लेखनी के द्वारा जागृत किया और अपने अकाट्य प्रमाणों से सिद्ध कर दिया कि आर्य भारत की मिट्टी से पैदा हुए हैं, कहीं बाहर से नहीं आए।

स्वराज्य की सर्वप्रथम घोषणा

इसे बहुत कम लोग जानते हैं कि महर्षि दयानन्द वह पहले महापुरुष थे जिन्होंने 'स्वदेशी' और 'स्वराज्य' का उद्घोष दिया। उन्होंने इस समुल्लास में तत्कालीन विदेशी राज्य को आर्यावर्त्त में दुर्दिनों की संज्ञा दी और स्वदेशी राज्य को ही सर्वश्रेष्ठ बताया।

इस समुल्लास में स्वामी जी ने सौर-मण्डल में सूर्य को केन्द्र मानते हुए पृथ्वी आदि ग्रह-नक्षत्रों को उसके चारों ओर चक्कर लगाने, व वैदिक विज्ञान की व्याख्या भी दी।

नवम् समुल्लास विद्या : अविद्या : मोक्ष ९

किसी वस्तु के बारे में कुछ भी न जानना अथवा जो वस्तु जैसी है उसे

Scanned with CamScanner

ठीक उसी प्रकार न जानना अज्ञान है। संसार के दुःखों, रोगों, क्लेश का कारण यही अज्ञान (अविद्या) है। अज्ञान ही सांसारिक उलझनों और बन्धन का कारण है। इस समुल्लास में स्वामी जी ने विद्या और अविद्या का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि नित्य को अनित्य, अपवित्र और पवित्र, दुःख को सुख और अनात्मा को आत्मा समझना अविद्या है : इसके विपरीत सभी स्थितियों-वस्तुओं को यथावत् समझना ज्ञान है, अधर्म और अज्ञान में फंसा हुआ जीव ही बद्ध है।

जीव और बन्धन—

जीव अल्पज्ञ है, इसीलिए वह बन्धन में आता है जीवात्मा कार्यों का कर्ता और भोक्ता है न कि साक्षी। क्योंकि शरीर, इन्द्रिय, अन्तःकरण, मन, अग, प्राण सभी जड़ हैं। अतः जिस प्रकार भूख, प्यास, दुःख आदि का अनुभव आत्मा करती है उसी तरह भले-बुरे कर्मों का कर्ता-भोक्ता भी आत्मा है, जीव अनादि है और अपनी अल्पज्ञता के कारण प्रकृति के विषयों में फसकर बन्धन का अनुभव करता है।

मुक्ति—

मानव जीवन का उद्देश्य ही मुक्ति है। मुक्ति का अर्थ है सासारिक दुःख-सुख से छुटकारा पाकर ब्रह्म को प्राप्त करना। उसी में रहना, स्वामी जी ने 'मुक्ति' के बारे में निम्न विचार इस समुल्लास में दिए हैं—

(१) मुक्ति में जीव अपना अस्तित्व नहीं खोता। मुक्ति में जीव का स्थूल शरीर नहीं होता किन्तु वह अपने सत्य संकल्पादि गुणों के कारण आनन्द की अनुभूति करता है।

(२) इस अवस्था में जीव अत्यन्त व्यापक होकर स्वच्छन्द रूप से ब्रह्म में विचरण करता है। जीवात्मा जितना ज्ञानी होता है ब्रह्म में उतना ही सुख मिलता है।

(३) मुक्ति के बाद जीवात्मा पुनः संसार में लौट आता है। क्योंकि अगर पुनरावृत्ति न हो तो धीरे-धीरे संसार में जीवों का अभाव हो जाएगा और फिर वह तो मुक्ति नहीं आजन्म कारागार जैसा हो जाएगा।

मुक्ति के उपाय—

मुक्ति का मूलभूत साधन धर्म है। धर्म के मार्ग पर चल ही ईश्वर (मोक्ष) को प्राप्त किया जा सकता है इसके लिए 'साधन चतुष्टय' का मार्ग सुझाया गया है।

१. विवेक—सत्य-असत्य, भले-बुरे कर्मों आदि का सही विश्लेषण व उचित

Scanned with CamScanner

निर्णय करने का गुण विवेक होता है। विवेक द्वारा यह जान लेना चाहिए कि आत्मा—(अ) अन्नमय, (ब) प्राणमय, (स) मनोमय, (द) विज्ञानमय और (इ) आनन्दमय। कोषों, जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति व तुरीय इन चार अवस्थाओं और स्थूल सूक्ष्म तथा कारण शरीरों से अलग है।

२. वैराग्य—विवेक के आधार पर निर्णय लेकर सत्य ईश्वर परायणता तथा परोपकार के मार्ग पर चलते हुए मोह व आसक्ति रहित होना वैराग्य है।

३ षटक सम्पत्ति—इसमें ६ प्रकार के कर्म हैं—

(अ) शम—आत्मा को धर्माचरण की ओर प्रेरित करना।
(ब) दम—इन्द्रियों तथा मन को विषयों से हटाकर रखना।
(स) उपरति—बुरे कर्म करने वाले दुष्टों से प्रभावित होना।
(द) श्रद्धा—विद्वानों और गुणवानों के प्रति सद्भाव।
(इ) तितिक्षा—लोगों के कहने की चिन्ता से मुक्त तथा हानि-लाभ के दु.ख-सुख से अप्रभावित होना।
(क) समाधान—मन की एकाग्रता।

४. मुमुक्षुत्व—मुक्ति के साधनों के प्रति मन को केन्द्रित रखना। साधन चतुष्टय के बाद चार प्रकार के अनुबन्ध भी बताए गए हैं।

(१) अधिकारी—उपरोक्त चार साधन पालन करने वाला ही मोक्ष का अधिकारी होता है।
(२) सम्बन्ध—ब्रह्म को मुक्तिस्वरूप (लक्ष्य) तथा वेद आदि शास्त्रों को साधन मानकर अनुसरण करना।
(३) विषयी—आत्मा का विषय ईश्वर है। उसे ईश्वर की ओर पूर्णत: लगाने वाला विषयी है।
(४) प्रयोजन—सभी दु:खों से निवृत्त होकर मुक्ति सुख को पहचानना।

अन्त में श्रवण चुतुष्य के पालन का विधान है—

(१) श्रवण—विद्वान आप्त पुरुषों के उपदेश शान्त मन व गम्भीरता-पूर्वक सुनना।
(२) मनन—इन उपदेशों पर विचार करना।
(३) निदिध्यासन—समाधिस्थ (शुद्धतम एकाग्रता की स्थिति) होकर

Scanned with CamScanner

अपने विचार का परीक्षण करना ।

(६) साक्षात्कार—किसी वस्तु को उसके गुण, कर्म, स्वभावानुसार जान लेना ।

मुक्ति के लिए निम्न पाँच प्रकार के क्लेशों से छुटकारा पाने का यत्न करना चाहिए—

(१) अविद्या—जैसे को तैसा न समझना ।

(२) अस्मिता—बुद्धि को आत्मा से भिन्न न समझना ।

(३) राग—सुख में प्रीत ।

(४) द्वेष—दुःख में अप्रीति ।

(५) अभिनिवेश—मृत्यु दुःख का भय ।

इस समुल्लास में महर्षि ने उन मान्यताओं का भी खण्डन किया है जो मोक्ष, स्वर्ग आदि के बारे में अनर्गल रूप मे प्रचलित हैं । उन्होंने लिखा है कि जैनियों की मोक्षशिला, मुसलमानों, ईसाइयों का चौथा या सातवां आसमान और पौराणिकों का गोलोग, विष्णु लोक, शिव लोक आदि गप्पें हैं । इन स्वर्गों के ऐश्वर्यशाली जीवन में रोग, भूख-प्यास, पारस्परिक विवाद आदि अवश्यम्भावी है । अतः ये अवैज्ञानिक मान्यताएं हैं ।

पुनर्जन्म चूंकि जीवात्मा नित्य है अतः उसका बार-बार विभिन्न शरीरों में जन्म लेना स्वयं सिद्ध है । पूर्व की बातें जीवात्मा को इसलिए याद नहीं रहतीं क्योंकि वह त्रिकालदर्शी नहीं अतः एक समय में दो बातें कैसे याद करे ।

कर्मफल—इसी समुल्लास में कर्मफल के सिद्धान्त की भी व्याख्या की गई है । ईश्वर जीव को उसके कर्मानुसार फल देता है, अच्छे कर्म करने पर जिस तरह वह अच्छी योनि प्राप्त करता है उसी तरह निकृष्ट कर्म करने पर उसे निकृष्ट योनि मिलती है । वह इसी तरह नाना प्रकार की योनियों में तभी तक चक्कर काटता रहता है जब तक उत्तम कर्मों द्वारा 'मुक्त' नहीं हो जाता ।

अतः ये महर्षि ने बताया है कि मुक्ति के लिए योग मार्ग का आश्रय लेना चाहिए । चित्त की वृत्तियों के निरोध का नाम योग है । इसके द्वारा ही आत्मा पूर्ण शुद्ध होता है ताकि वह ईश्वर के स्वरूप में स्थिर हो सके ।

दशम् समुल्लास : खान-पान व्यवहार १०

कोई मनुष्य ज्ञान, योग, आध्यात्म आदि में कितना ही पारंगत क्यों न

Scanned with CamScanner

हो किन्तु जब तक वह सामाजिक जीवन के सामान्य शिष्टाचारों का पालन नहीं करेगा तब तक सफल नहीं हो सकता।

सभ्यता को सांस्कृतिक मूल्य संचालित करते हैं। इन्हीं सांस्कृतिक मूल्यों का क्षय सभ्यता में विकृति उत्पन्न करता है और आचारों को भी, आचार को प्रतिष्ठित करने के लिए सांस्कृतिक मूल्यों को मजबूत तथा व्यावहारिक बनाना आवश्यक है।

संस्कृति किन्हीं गहरे में कल्याणकारी शाश्वत नियमों (धर्म) से जुड़ी होती है। अतः उत्कष्टतम संस्कृति धर्म ही होगा। दूसरे शब्दों में सर्वोत्तम आचार ही धर्म पालन होगा।

स्वामीजी ने धर्म और आचार की एकरूपता बताते हुए निम्न बातों को व्यवहृत करने का परामर्श दिया है —

१. जितेन्द्रियता —जितेन्द्रिय वह नहीं है जो प्रशंसा से प्रसन्न, आलोचना से रुष्ट, लाभ से प्रसन्न, हानि से दुःखी, उत्तम भोजन, सुगन्ध से प्रसन्न तथा इनके अभाव में दुःखी होता है।

अतः मनुष्य को जितेन्द्रिय होना चाहिए, यह सदाचार का मूलमन्त्र है।

२. सत्य —सत्य यथासम्भव प्रिय बोलना चाहिए। जिज्ञासु व्यक्ति को बिना पूछे भी ज्ञान देने का यत्न करना चाहिए।

३. विद्या —विद्या से सदाचार आता है। आयु से वृद्ध होने से कोई बड़ा नहीं होता, अगर युवा विद्वान् है तो वह बड़ा है।

४. पवित्रता —नित्य स्नान करके शरीर के अंगों को स्वच्छ रखे। पहनने तथा ओढ़ने-बिछाने के कपड़े तथा दैनिक उपयोग की वस्तुएं स्वच्छ रखनी चाहिएं।

५. बोलचाल में विनम्र तथा मधुर बनना चाहिए।

६. परोपकार —जिन कार्यों से समाज का भला हो उन्हें यथासम्भव करना चाहिए।

७. सत्संग—धर्मात्मा, गुणवान् विद्वान् व्यक्तियों से सम्पर्क रखना चाहिए।

स्वामीजी ने इस समुल्लास में कुछ अन्धविश्वासों का भी खण्डन किया है।

१. विदेश यात्रा—पौराणिकों में आज तक यह अन्धविश्वास प्रचलित है कि देश की सीमाओं से बाहर जाने से आचार नष्ट हो जाता है। यह बहुत बेबुनियाद बात है। जब तक विभिन्न देशों के लोगों में मुक्त आवागमन नहीं होता तब तक व्यापार, वाणिज्य, ज्ञान, कौशल, कला की उन्नति कदापि नहीं हो सकती।

Scanned with CamScanner

अपने विचार का परीक्षण करना ।

(४) साक्षात्कार—किसी वस्तु को उसके गुण, कर्म, स्वभावानुसार जान लेना ।

मुक्ति के लिए निम्न पाँच प्रकार के क्लेशों से छुटकारा पाने का यत्न करना चाहिए—

(१) अविद्या—जैसे को तैसा न समझना ।
(२) अस्मिता—बुद्धि को आत्मा से भिन्न न समझना ।
(३) राग—सुख में प्रीत ।
(४) द्वेष—दुःख में अप्रीति ।
(५) अभिनिवेश—मृत्यु दुःख का भय ।

इस समुल्लास में महर्षि ने उन मान्यताओं का भी खण्डन किया है जो मोक्ष, स्वर्ग आदि के बारे में अनर्गल रूप मे प्रचलित हैं । उन्होंने लिखा है कि जैनियों की मोक्षशिला, मुसलमानों, ईसाइयों का चौथा या सातवां आसमान और पौराणिकों का गोलोग, विष्णु लोक, शिव लोक आदि गप्पें हैं । इन स्वर्गों के ऐश्वर्यशाली जीवन में रोग, भूख-प्यास, पारस्परिक विवाद आदि अवश्यम्भावी है । अतः ये अवैज्ञानिक मान्यताएं है ।

पुनर्जन्म चूंकि जीवात्मा नित्य है अतः उसका बार-बार विभिन्न शरीरों में जन्म लेना स्वयं सिद्ध है । पूर्व की बातें जीवात्मा को इसलिए याद नहीं रहतीं क्योंकि वह त्रिकालदर्शी नहीं अतः एक समय में दो बातें कैसे याद करे ।

कर्मफल—इसी समुल्लास में कर्मफल के सिद्धान्त की भी व्याख्या की गई है । ईश्वर जीव को उसके कर्मानुसार फल देता है, अच्छे कर्म करने पर जिस तरह वह अच्छी योनि प्राप्त करता है उसी तरह निकृष्ट कर्म करने पर उसे निकृष्ट योनि मिलती है । वह इसी तरह नाना प्रकार की योनियों में नभी तक चक्कर काटता रहता है जब तक उत्तम कर्मों द्वारा 'मुक्त' नहीं हो जाता ।

अतः ये महर्षि ने बताया है कि मुक्ति के लिए योग मार्ग का आश्रय लेना चाहिए । चित्त की वृत्तियों के निरोध का नाम योग है । इसके द्वारा ही आत्मा पूर्ण शुद्ध होता है ताकि वह ईश्वर के स्वरूप में स्थिर हो सके ।

दशम् समुल्लास : खान-पान व्यवहार १०

कोई मनुष्य ज्ञान, योग, आध्यात्म आदि में कितना ही पारंगत क्यों न

Scanned with CamScanner

हो किन्तु जब तक वह सामाजिक जीवन के सामान्य शिष्टाचारों का पालन नहीं करेगा तब तक सफल नहीं हो सकता ।

सभ्यता को सांस्कृतिक मूल्य संचालित करते हैं । इन्हीं सांस्कृतिक मूल्यों का क्षय सभ्यता में विकृति उत्पन्न करता है और आचारों को भी, आचार को प्रतिष्ठित करने के लिए सांस्कृतिक मूल्यों को मजबूत तथा व्यावहारिक बनाना आवश्यक है ।

संस्कृति किन्हीं गहरे में कल्याणकारी शाश्वत नियमों (धर्म) से जुड़ी होती है । अतः उत्कष्टतम संस्कृति धर्म ही होगा । दूसरे शब्दों में सर्वोत्तम आचार ही धर्म पालन होगा ।

स्वामीजो ने धर्म और आचार की एकरूपता बताते हुए निम्न बातों को व्यवहृत करने का परामर्श दिया है —

१. जितेन्द्रियता —जितेन्द्रिय वह नहीं है जो प्रशंसा से प्रसन्न, आलोचना से रुष्ट, लाभ से प्रसन्न, हानि से दुःखी, उत्तम भोजन, सुगन्ध से प्रसन्न तथा इनके अभाव में दुःखी होता है ।

अतः मनुष्य को जितेन्द्रिय होना चाहिए, यह सदाचार का मूलमन्त्र है ।

२. सत्य —सत्य यथासम्भव प्रिय बोलना चाहिए । जिज्ञासु व्यक्ति को बिना पूछे भी ज्ञान देने का यत्न करना चाहिए ।

३. विद्या —विद्या से सदाचार आता है । आयु से वृद्ध होने से कोई बड़ा नहीं होता, अगर युवा विद्वान् है तो वह बड़ा है ।

४. पवित्रता —नित्य स्नान करके शरीर के अंगों को स्वच्छ रखे । पहनने तथा ओढ़ने-बिछाने के कपड़े तथा दैनिक उपयोग की वस्तुएं स्वच्छ रखनी चाहिएं ।

५. बोलचाल में विनम्र तथा मधुर बनना चाहिए ।

६. परोपकार —जिन कार्यों से समाज का भला हो उन्हें यथासम्भव करना चाहिए ।

७. सत्संग—धर्मात्मा, गुणवान् विद्वान् व्यक्तियों से सम्पर्क रखना चाहिए ।

स्वामीजी ने इस समुल्लास में कुछ अन्धविश्वासों का भी खण्डन किया है ।

१. विदेश यात्रा—पौराणिकों में आज तक यह अन्धविश्वास प्रचलित है कि देश की सीमाओं से बाहर जाने से आचार नष्ट हो जाता है । यह बहुत बेबुनियाद बात है । जब तक विभिन्न देशों के लोगों में मुक्त आवागमन नहीं होता तब तक व्यापार, वाणिज्य, ज्ञान, कौशल, कला की उन्नति कदापि नहीं हो सकती ।

Scanned with CamScanner

अच्छे आचरण तो दुनिया के किसी भी कोने में रहकर किए जाएं वे सदाचरण ही रहेंगे और यदि दुष्ट कार्य, स्वदेश या स्वग्राम में किए जाएं तो वे सदाचरण कभी नहीं हो सकते।

२. चौका लगाना—उत्तर भारत में आज भी यह कुप्रथा प्रचलित है कि रसोई घर को पहले लीप-पोत कर ही कोई व्यक्ति भोजन करता है, फिर दूसरे व्यक्ति के लिए दोबारा यही सब करना पड़ता है। रसोई घर को स्वच्छ रखना तो ठीक है किन्तु इस तरह की कोई कुरीति उचित नहीं।

३. सखरी-निखरी—पाखण्डी ब्राह्मणों ने अपनी पेट पूजा के लिए जल से पकी वस्तु को सखरी तथा दूध-घी में पकाई वस्तु को निखरी नाम देकर केवल निखरी भोजन ही ब्राह्मणों के लिए बताया।

४. भोजन में छुआछूत नहीं मानना चाहिए, भोजन बनाने का कार्य सेवक (शूद्र) के हाथों सौंपा जाए।

५. गन्दगी में उत्पन्न हुए शाक-सब्जी, फल नहीं खाना चाहिए।

६. अण्डा, मद्य, मांस, गांजा, भांग, अफीम आदि शरीर तथा मन के लिए अत्यन्त हानिकारक हैं। इनका सेवन नहीं करना चाहिए।

७. हिंसा, चोरी, झूठ आदि से प्राप्त भोजन अभक्ष्य है।

८. एक थाली में एक साथ बैठकर भोजन करना उचित नहीं क्योंकि रोग फैलने की आशंका रहती है।

९. किसी भी साफ-सुथरी जगह पर भोजन किया जा सकता है केवल चौके में नहीं।

गौहत्या का विरोध—

कोई उपकारी की, पशु की हत्या नहीं की जानी चाहिए। मुख्यत: गाय तो ऐसा प्राणी है जिसका जीवन ही उपकार का पर्यायवाची है। स्वामी जी ने गणना करके लिखा है कि एक गाय की पीढ़ी से चार लाख पचहत्तर हजार छः सौ मनुष्यों को सुख पहुंचता है। इन पशुओं की हत्या पर राज्य द्वारा पाबन्दी लगाई जानी चाहिए।

एकादश समुल्लास : पाखंड खंडन ११

एक समय था जब भारत जगद्गुरु माना जाता था उसे सोने की चिड़िया कहते थे। विश्व की सर्वश्रेष्ठ जाति भारत की आर्य जाति थी। विश्व भर के ज्ञानपिपासु भारतीय मनीषियों के चरणों में बैठकर ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा लेते

Scanned with CamScanner

थे। 'स्वायम्भुव' राजा से लेकर पाण्डव तक भारत का चक्रवर्ती साम्राज्य था, भारतीय कला-कौशल अपने चरमोत्कर्ष पर था। यहाँ तक कि उन दिनों भी भारतीय परमाणु अस्त्रों तथा वायुयानों का उपयोग करते थे।

आज विश्व के बड़े वैज्ञानिक और विचारक भी यह मानते हैं कि विज्ञान तथा गणित का विकास ही भारत में हुआ तथा बाद में विश्व के अन्य देशों में प्रसार हुआ।

अब प्रश्न उठता है कि वह महानता कैसे रसातल में पहुंच गई ?

इसका उत्तर स्वामी जी ने इस समुल्लास में दिया है। महाभारत के उस विश्वयुद्ध में भारत की समूची प्रतिभा एक बार आहुत हो गई और उसके बाद अल्पज्ञानियों और पाखण्डियों ने स्वयं को स्थापित करना आरम्भ कर दिया।

कालान्तर में देश में अनेकों व्यक्तियों ने बहुत से मत, पन्थ-वाद चलाए। ये ही मत-मतान्तर भारत की अवनति के मुख्य कारण बने हुए हैं। आज तक भी अवतारों, ईश्वरों और धर्मागुरुओं की बाढ़ आई हुई है। महाभारत काल के बाद जो प्रमुख मत-मतान्तर हमारे देश में जन्मित हुए उनकी अवैज्ञानिकताओं का खण्डन इस समुल्लास में है—

१. वाममार्ग—

यद्यपि यह मत इन दिनों अपने पूर्व स्वरूप में तो नगण्य सा ही है किन्तु ऐसे मत और विचार आज बहुत तेजी से देश में विकसित हो रहे हैं। जिनका मूल भाव वाममार्गी है। मूल वाममार्ग में पांच चीजों को मोक्ष का मार्ग बताया गया है—शराब, मांस, मछली, पकवान तथा नारी।

वाममार्ग के समारोहों और उपासनाओं में तो अत्यन्त ही घृणित और अश्लील कृत्य किये जाते रहे हैं। इन्हीं लोगों के यज्ञ में पशुबलि और नरबलि की कुप्रथाएं प्रचलित थीं।

२. बौद्ध, जैन तथा चारवाक—

उस समय अज्ञानी ब्राह्मणों के स्वार्थपरक कर्मकाण्ड जन्मगत जाति, मृतक श्राद्ध तथा वाममार्गियों आदि के अश्लील कुकृत्यों की प्रतिक्रिया में बौद्ध और जैन मतों की उत्पत्ति हुई। इसकी विस्तृत व्याख्या अगले समुल्लास में की गयी है।

इन्ही कारणों से चार्वाक जैसा नास्तिकतावादी विचारक उत्पन्न हुआ। जिसने कर्मकाण्ड के साथ-साथ ईश्वर कर्मफल आदि के विरुद्ध भी धुंआधार प्रचार किया। यही चार्वाक आज भी किसी न किसी रूप में भारतीय व विदेशी विचारकों में जीवित है।

Scanned with CamScanner

३. शंकराचार्य का वेदान्त—

जिस समय जैन और बौद्ध मतों का बहुत अधिक विकास हो चुका था। उस समय अर्थात् लगभग बाईस सौ वर्ष पहले आचार्य शंकर का जन्म हुआ। वे अत्यन्त विद्वान थे और उन्होंने अपनी अजेय युक्तियों से जैन मत का खण्डन करते हुए वैदिक धर्म की स्थापना की।

स्वामीजी ने लिखा है कि ब्रह्म और जीव की एकरूपता तथा जगत मिथ्या का सिद्धान्त अगर शंकराचार्य जी ने जैनमत के खण्डन के लिए प्रयुक्त किया तब तो कुछ ठीक था किन्तु यदि उनका निज का मत था तो वेद सम्मत नहीं है।

४. शंकराचार्य जी के तीन सौ वर्ष बाद—

शिवानुयायियों का अभ्युदय हुआ। इन्होंने शंकराचार्य को ही शिव का अवतार मान लिया। इनमें संन्यासी भी सम्मिलित हो गए।

५. वैष्णव—

इसके उपासक अपना इष्ट, शिव मानते हैं और वे शैव मत के विरोधी हैं।

६. कबीर पन्थ—

यह मत कबीर दास जी का चलाया हुआ है। इसके अनुयायी भी अनेक कपोल कल्पित बातें करते हैं जैसे कबीरदास फूलों में से पैदा हुए थे। आदि ये गद्दी, तकिये, खड़ाऊं, कण्ठी, माला की पूजन करते हैं।

नानक पन्थ –

गुरु नानक ने एक मार्ग चलाया जो नानक पन्थ के नाम से जाना जाता है। इन्होंने अनेकों हिन्दुओं को मुसलमान होने से बचाया, यह इस पन्थ का ऐतिहासिक महत्त्व है।

ये मूर्तिपूजा का विरोध करते हैं किन्तु धर्मग्रन्थ (गुरुग्रन्थ साहब) की पूजा करते हैं। इस ग्रन्थ में अनेकों परस्पर विरोधी बातें हैं।

८. दादू पन्थी, राम स्नेही, गोकुलिए, स्वामी नारायण, ब्राह्मसमाज और प्रार्थना समाज का भी खण्डन किया है।

मूर्त्तिपूजा—

मूर्तिपूजा का प्रारम्भ जैनियों ने अपनी मूर्तियां बनवाकर किया। इन्हीं की देखा-देखी अथवा स्पर्धा में शैवों, वैष्णवों आदि ने भी अपने इष्टों की

Scanned with CamScanner

मूर्तियां गढ़ लीं। सर्वव्यापक और निराकार ईश्वर की मूर्तियां गढ़ना अयुक्ति संगत है। एक देशीय ईश्वर जगत् नियन्ता कैसे हो सकता है ? जो यह कहते हैं कि निराकार ईश्वर में ध्यान नहीं लगा सकता। अत: प्रतिभा होना आवश्यक है, उन्हें जानना चाहिए कि ईश्वर स्मरण उसके बनाए नदी, पर्वत, वनस्पति व मनुष्यादि प्राणी को देखकर किया जा सकता है।

मूर्तिपूजा से निम्न प्रमुख हानियाँ हैं।

१. वेद में मूर्तिपूजा का निषेध है।

२. मंहगे मन्दिर बनवाने से अपव्यय होता है और ये मन्दिर व्यभिचार या शृंगार के केन्द्र बन जाते हैं।

३. विभिन्न आकृतियों की मूर्तियाँ के कारण पुजारियों में मतैक्य न होने से आपसी लड़ाई-झगड़े होते हैं।

४. जीव मात्र तथा माता-पिता की सेवा के स्थान पर अधिक समय और ध्यान पाषाण पूजने में नष्ट होता है।

५. दुष्ट पुजारियों को धन मिलने से वे दुराचार करते हैं।

६. जैसी वस्तु का ध्यान किया जाय मनुष्य की बुद्धि वैसी ही बनने लगती है। जड़ का ध्यान करने बुद्धि से जड होने लगती है।

७. मूर्तिपूजा के कारण पूजा पद्धतियां की विविधता से सामाजिक एकता में व्यवधान उत्पन्न होता है।

८. मन्दिरों की आड़ में काले धन्धे किये जाते हैं।

मूर्तिपूजा के विकल्प में स्वामी जी ने पंचायतन पूजा की व्यवस्था दी है। (१) माता, (२) पिता, (३) आचार्य, (४) अतिथि, (५) पति के लिए पत्नी व पत्नी के लिए पति पूज्य हैं।

यही पांच मूर्तिमान देव हैं।

अवतार निषेध—निराकार सर्वव्यापक, अनन्त परमात्मा गर्भस्थ होकर जन्म-मृत्यु की सीमाओं में नहीं पड़ता।

जाप—किसी वस्तु के नाम का जाप करने से जिस प्रकार वह नहीं मिल सकती उसी तरह ईश्वर नाम की मात्र रट लगाने से कोई लाभ नहीं।

तीर्थ—विद्वानों के संग, परोपकार, सत्य, योगाभ्यास, ईश्वर परायणता, ब्रह्मचर्य, सदाचार, वेदादिशास्त्र पढ़ने-पढ़ाने से मनुष्य दु:खों से तर जाता है। अत: ये ही तीर्थ हैं। किन्हीं विशेष स्थानों के चक्कर लगाते रहना तीर्थ नहीं हैं।

Scanned with CamScanner

वैतरणो—मानव अपने कर्मानुसार सुख-दुःख भोगता है पृथक से कोई नरक-स्वर्ग या वैतरणी आदि नहीं हैं।

ज्योतिष—गणित ज्योतिष जिसके द्वारा ग्रह नक्षत्रों की स्थिति-गति की गणना की जाती है, सही है। फलित ज्योतिष, जिसके द्वारा लोग भविष्य फल बताते हैं वह अवैज्ञानिक है। जब सूर्य और पृथ्वी के मध्य चन्द्रमा आ जाता है तब सूर्य ग्रहण और जब सूर्य व चन्द्रमा के बीच पृथ्वी आ जाती है तब चन्द्र ग्रहण पड़ता है। शेष सब कपोल कल्पित कल्पनाएं हैं।

ग्रह नक्षत्र भी पृथ्वी की तरह ही पिण्ड हैं जो सूर्य के चक्कर लगाते हैं। इन्हें पूजना अज्ञानता है।

द्वादश समुल्लास : अवैदिक मत खंडन १२

इस ससुल्लास में स्वामीजी ने निरीश्वरवादी मतों की समीक्षा की है।

चारवाक—इस मत के प्रवर्तक वृहस्पति नामक व्यक्ति ने ईश्वर पुनर्जन्म के अस्तित्व को नकारा। उसने कहा कि यही लोक सब कुछ है। परलोक कुछ नहीं। अतः जैसे भी सम्भव हो सुख से जीओ।

यह मत वाममार्ग का पोषक ही है अगर बेईमानी, झूठे झगड़े आदि से अपनी इन्द्रियों की तृप्ति के लिए जुटा रहा जाय तो कोई भी समाज नहीं रह सकता न ही व्यक्ति का जीवन व्यवस्थित रह सकता है।

बौद्ध धर्म

चारवाक मतावलम्बी जहां पुनर्जन्म नहीं मानता और मृत्यु के साथ ही जीव की समाप्ति मानता है वही बौद्ध और जैन जीव को अनादि मानते हैं। किन्तु वेद, ईश्वर को कोई नहीं मानता। बौद्ध चार प्रकार के हैं। इस मत के प्रवर्तक महात्मा बुद्ध थे।

१. माध्यमिक—ये सभी वस्तुओं को शून्य मानते हैं। आदि में सब कुछ शून्य है अन्त में भी शून्य हो जाएगा।

समीक्षा—अगर सब शून्य है तो शून्य को जानने वाला भी क्या होगा? शून्य स्वयं शून्य को कैसे जान सकता है?

२. योगाचार—ये बाहर का सब कुछ शून्य है किन्तु भीतर जो कुछ वह भीतर है और उसी का ज्ञान होता है।

समीक्षा—बाहर जो मोटर, रेल, नदी, पहाड़ दीख रहे हैं। क्या वे सब भीतर हो सकते हैं? इसकी परिमाण की सीमा कहां रही? अतः जो

Scanned with CamScanner

बाहर दीखता है उसकी स्थिति बाहर ही है।

३. सौत्रान्त्रिक—ये मानते हैं कि जो कुछ बाहर दीखता है उसका आंशिक ज्ञान ही हमें हो पाता है बाकी सब अनुमान के आधार पर होता है।

४. वैभाषिक—इनके मतानुसार जो वस्तु बाहर है उसका अनुभव भी बाहर ही होता है, भीतर कुछ नहीं।

समीक्षा—जहां ज्ञाता और ज्ञान हो वहीं कोई वस्तु प्रत्यक्ष हो सकती है, हालांकि प्रत्यक्ष का विषय वस्तु होती है किन्तु अनुभूति तो अन्दर होती है।

बौद्धों की संसारको क्षणभंगुर और दुःखपूर्ण मानने की युक्ति सम्मत नहीं यह है। तो माना जा सकता है कि प्रकृतिस्थ वस्तुओं में परिवर्तन होता रहता है किन्तु क्षणभंगुर तो नहीं दुःख का कारण होता है, अनासक्त भाव से धर्माचरण करने पर संसार सुखपूर्ण लगेगा।

बौद्ध मत में पांच स्कन्ध हैं। रूप, विज्ञान, वेदना और संस्कार स्कन्द। स्वामीजी ने इन्हें अपूर्ण बताया है। बौद्ध लोग बुद्ध की मूर्ति की पूजा भी करने लगे हैं जो अवैज्ञानिक कृत्य है।

जैनमत

'जिन' देव के उपासक होने के कारण इन्हें जैन कहा जाता है। ये दो प्रकार के होते हैं। १. श्वेताम्बर, २. दिगम्बर। जैनी लोग छः द्रव्यों को मानते हैं। १. धर्म, २. अधर्म, ३. आकाश, ४. पुद्गल, ५. जीव, ६. काल।

धर्म अधर्म गुण हैं द्रव्य नहीं। वैशेषिक दर्शन में नौ द्रव्य माने गए हैं।

जैन लोगों की मान्यता है कि जीव ही मृत्यु के पश्चात् परमेश्वर बन सकता है सभी तीर्थंकर ईश्वर बन गए हैं।

स्वामीजी ने इसकी समीक्षा में लिखा है कि जीव तथा ईश्वर में गुण, कर्म, स्वभाव की विषमता होने के कारण जीव ईश्वर नहीं बन सकता।

जीव का शरीर और उसकी मुक्ति :

जैन ग्रन्थों में लिखा है कि चेतना लक्षण जीव और चेतना रहित अजीब जड़ हैं। सत्कर्म रूप पुदगल पुण्य और पाप कर्म रूप पुद्गल पाप कहलाता है।

समीक्षा—जीव व जड़ के गुण तो ठीक लिखे गए हैं किन्तु जड़ के साथ पाप-पुण्य का कोई चक्र नहीं होता।

जैन ग्रन्थों के अन्दर वर्णित गप्पों को भी स्वामीजी उद्धृत किया है। उदाहरणार्थ 'रत्नसार' पृष्ठ १४६ में लिखा है—"प्रत्येक वनस्पति के जीव शरीर

Scanned with CamScanner

की लम्बाई एक सहस्र योजन और आयु दस सहस्र योजन होता है। शंख, कौड़ी और जूं का शरीर अड़तालीस कोष और आयु बारह वर्ष होती है।" आदि।

वर्जित कर्म (यतना)

निम्न छः कर्म जैनियों में वर्जित माने जाते हैं।

१. दूसरे के मत का गुण-कीर्तन प्रशंसा।

२. दूसरे मत वालों को नमस्कार न करें।

३. अन्य मतावलम्बी के साथ बात न करें। बोलना हो तो थोड़ा बोलें।

४. अन्य मतवालों से व्यवहार न करें।

५. अन्य मत वालों को खाने-पीने की वस्तुएं व वस्त्र आदि न दें।

६. उन्हें प्रतिमा पूजन को पुष्प आदि न दें।

पाठक स्वयं समझें कि उपरोक्त बातें कहां तक मानवीय हैं? इसी तरह जैन ग्रन्थ अन्य मतावलम्बियों की आलोचना से भरे पड़े हैं।

युक्ति—जैनियों का स्वर्ग एक शिला है जहां कोई दुःख नहीं होता। किन्तु यह बात गप्प लगती है क्योंकि शिला कहां है? कैसे टिकी है? जीव कहां किस रूप में पहुंचता है? कब तक रहता है आदि बातों के वैज्ञानिक उत्तर जैन साहित्य में नहीं हैं।

तीर्थंकर का शरीर—'रत्नसार' (पृष्ठ १६६) पर लिखा है कि ऋषभ देव का शरीर पाँच सौ धनुष लम्बा था। (१ धनुष=साढ़े तीन हाथ) यह असत्य नहीं तो क्या है?

जैन साहित्य इसी तरह की हजारों गप्पों से भरा पड़ा है। स्वामी जी ने इनका बहुत युक्तिपूर्ण खण्डन किया है।

त्रयोदश समुल्लास : ईसाई मत विचार १३

इस समुल्लास में ईसाई मत की समीक्षा की गई है। महर्षि दयानन्द ने ईसाइयों के धर्मग्रन्थ बाईबिल के गम्भीर अध्ययन के बाद उनकी तर्कपूर्ण समीक्षा निम्नानुसार है—

१. सृष्टि का आरम्भ—बाईबिल में लिखा है कि परमात्मा ने आरम्भ में पृथ्वी की रचना की फिर उसने कहा उजियाला हो जा तो उजियाला हो गया। उसने आकाश को स्वर्ग कहा फिर दिन और रात बनाए।

Scanned with CamScanner

समीक्षा —आरम्भ से यहां क्या आशय है ? इस 'आरम्भ' से पहले क्या था ? जब सूर्य की रचना नहीं हुई थी तो उजियाला कैस हुआ ? दिन और रात कैसे हुआ ?

२. स्त्री-पुरुष को उत्पत्ति —'ईश्वर ने आदम को मिट्टी से अपने स्वरूप में बनाया और उसके नथुनों में जीवन का श्वास फूंककर जीवित कर दिया और अदन के बाग में रख दिया। उसने आदम को बेहोश करके उसकी पसलियों में से एक पसली निकाली और उस पसली से नारी का निर्माण किया।

समीक्षा —जब प्रारम्भ भी ईश्वर के अलावा कुछ नहीं था तो मिट्टी कहां से आई ? आदम ईश्वर के स्वरूप में होता तो हम सब ज्ञानमय, पवित्र और आनन्दमय होते। अदन का बाग कब बना था ? क्या आज भी आदम के बेटे केवल मिट्टी से बने हैं ? क्या उनमें एक पसली कम होती है ? क्या नारियों में एक ही पसली होती है ?

३. बाइबिल में शैतान को परमेश्वर से बड़ा बताया गया है।

४. बाइबिल में लिखा है कि एक बार ईश्वर को 'काइन' द्वारा लाई फल फूल की भेंटों को अस्वीकार करके हाबील की मोटी भेड़ों को स्वीकार किया। तात्पर्य यह कि ईश्वर मांसाहारी हुआ।

५. बाइबिल का परमेश्वर आदमी को पृथ्वी पर उत्पन्न करके बहुत पछताया था उसने कहा कि मैं मनुष्यों, पशुओं, पक्षियों को पृथ्वी पर से नष्ट कर दूंगा।

इसका तात्पर्य यह है कि बाइबिल का ईश्वर अदूरदर्शी तथाअल्पज्ञ है।

६. ईश्वर ने एक बार देखा कि पृथ्वी के सारे लोगों ने एक भाषा व बोली होने के कारण इकट्ठे होकर स्वर्ग की तरफ चढ़ने का निश्चय कर लिया तो ईश्वर ने चिन्तित होकर पृथ्वी वासियों की भाषा में गड़बड़ी उत्पन्न कर दी।

७. बाइबिल का पैगम्बर झूठ बोलता है।

८. बाइबिल में लिखा है कि ईश्वर ने बछड़े का मांस खाया था।

९. दुराचार का वर्णन इस सीमा तक है कि पिता ने अपनी पुत्रियों के साथ सहवास किया।

१०. ईश्वर हत्यारा है —क्योंकि बाइबिल में लिखा है कि यहूदियों के पैगम्बर मूसा ने एक मिस्त्री को मारकर बालू में छिपा दिया। इतना ही नहीं उसने क्रुद्ध होकर सत्तर हजार इजराइल मार डाले थे।

११. पाप से छूटने की विधि —जब कोई पाप करे तो वह गाय,

Scanned with CamScanner

बछिया या बकरे की बलि परमेश्वर के आगे रखे, अगर भेड़ आदि लाने की पूंजी न हो तो कबूतर के बच्चे की गर्दन मरोड़कर भेंट चढ़ा दिया जाय। अगर इतना भी सामर्थ्य न हो तो सेर भर आटे का दसवां हिस्सा भेंट चढ़ावे।

१२. ईसा की माता मरियम की मंगनी यूसुफ के साथ हुई थी किन्तु वह विवाह से पहले ही गर्भवती हो गई। तब ईश्वर के दूत ने स्वप्न में दर्शन देकर कहा, "हे यूसुफ तू अपनी स्त्री मरियम को यहां लाने से मत डर क्योंकि वह पवित्रात्मा से गर्भवती हुई है।"

समीक्षा—यह सृष्टि क्रम के सर्वथा विरुद्ध है। निश्चय ही मरियम किसी अन्य पुरुष से गर्भवती हुई होगी अथवा बाद में गप्प बना दी गई।

तात्पर्य यह कि ईसाई मत और उनका धर्मग्रन्थ बाइबिल बेसिर-पैर की गप्पों से भरा हुआ है, जिनका कतई वैज्ञानिक आधार नहीं। प्रकृति के सामान्य नियमों की थोड़ी भी जानकारी रखने वाला कोई व्यक्ति इनमें विश्वास नहीं कर सकता। दुर्भाग्य से आज हमारे देश में ईसाई मत को बड़े पैमाने पर फैलाने का अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास चल रहा है। भारत की महान् संस्कृति की हत्या के लिए एक खतरनाक षड़यन्त्र चलाया जा रहा है। कान्वेंट स्कूलों के द्वारा शहरी संभ्रात बच्चों के मस्तिष्क में अंग्रेजियत के संस्कार निर्मित किये जा रहे हैं : गांवों के भोले-भाले, निर्धनों आदिवासियों को चिकित्सा या इसी तरह की कोई आर्थिक सुविधा देकर उनसे उनके दिलों भरी भारतीय माटी की महक छीनी जा रही है। वेद की ऋचाओं के स्थान पर बाइबिल के वाक्य तथा गौतम कपिल कणाद् राम-कृष्ण दयानन्द की जमीन पर ईसा भक्तों की फौज तैयार करने के लिए गोरे अमीर देश असीमित पैसा बहा रहे हैं।

बिडम्बना है। कहां गई हमारे खून की वह गर्मी जिसके कारण आर्यावर्त में चक्रवर्ती राज्य था। अभी भी समय है कि वे सभी भारतीय जिन्हें भारत की महान् संस्कृति और वेद से प्यार है, मिल-जुलकर इस षड़यन्त्र को नाकाम कर दें।

चतुर्दश समुल्लास : इस्लाम १४

ईसाई की तरह इस्लाम मत में भी अवैज्ञानिक कपोल-कल्पित बातें भरी पड़ी हैं। इनका धर्मग्रन्थ कुरान है। इसमें से कुछ निम्नलिखित बातें कितनी सफेद झूठ हैं जरा पाठक विचार करें—

१. अल्लाह ने उनके दिलों और कानों पर मोहर कर दी।

(सि० १ आ० ६-५)

Scanned with CamScanner

२. उनके दिलों में रोग है अल्लाह ने उनका रोग बढ़ा दिया। १-१०
बिना अपराध रोग बढ़ाने से अल्लाह अन्यायी हुआ।

३. उस आग से डरो जिसका ईंधन मनुष्य और पत्थर होंगे और जो काफिरों के लिए तैयार की गई है।

समीक्षा—इस तरह की बातों के मानने से साम्प्रदायिक दुर्भावना ही फैलती है।

४. बाइबिल की तरह कुरान में भी शैतान को खुदा से बड़ा बताया गया है। अगर शैतान ही खुदा से बड़ा है फिर खुदा (ईश्वर) की क्या सार्थकता ?

५. जब मूसा ने अपनी कौम के लिए पानी मांगा, हमने कहा, अपना अस्त्र (दण्ड) पत्थर पर मार उसमें से बारह चश्मे बह निकलेंगे।
१-११७

६. जो आसमान और भूमि का उत्पादन करने वाला है. जब वह कुछ करना चाहता है तब यह नहीं कि उसे कुछ करना पड़ता है किन्तु उसे कुछ कहना पड़ता है कि 'हो जा' बस हो जाता है।

समीक्षा : खुदा ने आदेश दिया 'हो जा' किन्तु सुनने वाला कौन था। निर्जीव वस्तु कैसे सुन सकती है ?

७. अल्लाह के मार्ग में लड़ो उनसे जो तुमसे लड़ते हैं। मार डालो तुम उनको जहां पाओ। कतल से कुफ्र बुरा है यहां तक लड़ो कि कुफ्र न रहे और होवे दीन अल्लाह का। उन्होंने जितनी ज्यादती की तुम पर, तुम उतनी ही उन पर करो। २-१९० से १९४

समीक्षा : स्पष्ट है इस तरह की बातों को मानने के कारण ही मुसलमान जाति के द्वारा मजहब के नाम पर सर्वाधिक खून खराबा होता है। ये बातें मानवता से परे हैं।

८. तुम्हारी बीवियां तुम्हारे लिए खेतियां हैं। बस जाओ जिस तरह चाहो अपने खेत में।
२-२२३

समीक्षा : इस प्रकार की आचार संहिता के कारण ही इस्लाम समाज में नारियों की स्थिति गुलामों से ज्यादा बदतर है। ईश्वर ने स्त्री और पुरुष को एक दूसरे के पूरक की तरह बनाया है न कि उपभोग की सामग्री की तरह।

९. कुरान में लिखा है कि जो मनुष्य अल्लाह को उधार देता है अल्लाह उसका दुगुना करके लौटा देता है।

Scanned with CamScanner

समीक्षा : अल्लाह को उधार लेने की क्या जरूरत पड़ेगी फिर अल्लाह अपूर्ण हुआ ।

१०. खुदा को एक देशी माना गया है ।

११. जिसको चाहता है क्षमा करता है, जिसको चाहता है दुःख देता है ।

समीक्षा : इस बात से तो यह साबित होता है कि खुदा न्याय परायण नहीं बल्कि कोई तानाशाह है ।

१२. कुरान में ही कुरान को इतिहास ग्रन्थ बताया गया है ।
"जब यूसुफ ने अपने बाप से कहा कि ऐ बाप मेरे, मैंने एक स्वप्ट में देखा ।" १२-१३।१-१०४

१३. अन्लाह को कसम खाने की जरूरत पड़ती है । असम अल्लाह की अवश्य भेजे हमने अपने पैगम्बर । १४।६३

१४. और किया हमने दोजख को, वास्ते काफिरों के घेरने का स्थान । १५।८

१५. घोर किए हमने बीच पृथ्वी के पहाड़ ऐसा न हो कि हिल जावे । १७।२१

१६. और जबकि सूर्य लपेटा जावे, जबकि तारे गदले हो जावें और जबकि पहाड़ चलाए जावें और जब आसमान की खाल उतारी जावे । ३०।१-३-११

१७. बाइबिल की तरह कुरान में भी दुराचार की गाथाएं भरी पड़ी हैं । इसमें पुत्रबधू से विवाह करने का विधान है ।

१८. फिर निश्चय तुम दिन कयामत के उठाए जाओ उस दिन उनकी जबानें हाथ और पांव उनके विरुद्ध उस चीज की गवाही देंने जो कुछ वे करते थे । १८।१६-२४

समीक्षा : अगर कयामत तक मुर्दे जमीन में पड़े रहेंगे (जैसा इस्लाम में विधान है) तो उनका सारा शरीर गल चुका होगा, हाथ-पैर भी गल चुके होंगे फिर गवाही कौन देगा ।

अव्वल तो कयामत की कल्पना ही बेबुनियाद है ।

आज हमारे देश में बड़ी संख्या में मुसलमान हैं । किन्तु उनकी सामाजिक स्थिति अत्यन्त दयनीय है । अगर वे कुरान की मानसिक गुलामी से युक्त होंगे तभी अज्ञान के अन्धकार से मुक्त हो सकते हैं ।



Scanned with CamScanner

महर्षि की मान्यताएं

सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् साम्राज्य सार्वजनिक धर्म जिसको सदा से सब मानते आये, मानते हैं और मानेंगे भी इसीलिये उनको सनातन नित्य-धर्म कहते हैं कि जिसका विरोधी कोई भी न हो सके। किन्तु जिसको आप्त अर्थात् सत्यमानी, सत्यकारी, परोपकारक, पक्षपातरहित विद्वान् मानते हैं, वही सबको मन्तव्य और जिसको नही मानते वह अमन्तव्य होने से प्रमाण के योग्य नहीं होता।

—मैं अपना मन्तव्य उसी को जानता हूं कि जो तीन काल में सबको एक-सा मानने योग्य है।

— मेरा कोई नवीन कल्पना वा मतमतान्तर चलाने का लेशमात्र भी अभिप्राय नहीं है किन्तु जो सत्य है उसको मानना मनवाना और जो असत्य है उसको छोड़ना और छुड़वाना मुझको अभीष्ट है।

— मनुष्य उसी को कहना कि मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे, अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुणरहित क्यों न हों—उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ महाबलवान् और गुणवान् भी हो तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करें अर्थात् जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करें। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही चले जावें परन्तु इस मनुष्यरूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।

—जो-जो बातें सबके सामने माननीय हैं उनको मानना अर्थात् जैसे सत्य बोलना सबके सामने अच्छा और मिथ्या बोलना बुरा है, ऐसे सिद्धान्तों को स्वीकार करता हूं और जो मतमतान्तर के परस्पर विरुद्ध हैं उनको मैं पसन्द नहीं करता क्योंकि इन्हीं मत वालों ने अपने मतों का प्रचार कर मनुष्यों को फंसा के परस्पर शत्रु बना दिये हैं। इस बात को काट "सर्वसत्य का प्रचार कर सबको ऐक्यमत में करा द्वेष छुड़ा परस्पर में दृढ़ प्रीतियुक्त करा के सबसे सबको सुख लाभ पहुंचाने के लिये मेरा प्रयत्न और अभिप्राय है।

—सर्वशक्तिमान् परमात्मा की कृपा, सहाय और आप्तजनों कीस हानुभूति से 'यह सिद्धान्त सर्वत्र भूगोल में शीघ्र प्रवृत्त हो जावे' " जिससे सब लोग सहज से धर्म्मार्थ काम मोक्ष की सिद्धि करके सदा उन्नत और आनन्दित होते रहें, यही मेरा मुख्य प्रयोजन है।

—दयानन्द सरस्वती

Scanned with CamScanner

आप का अपना धर्म ग्रन्थ
परमात्मा की अमरवाणी

चारों वेदों का हिन्दी भाष्य

आज ही अपने घर में लाकर प्रभु का आशीर्वाद प्राप्त करें

पूरी जानकारी पत्र लिख कर मंगाएँ

जिसके घर में वेद नहीं वह हिन्दू का घर नहीं

दूरभाष - ५६६६३१ : ८०१२२१

पंडिता राकेश रानी अध्यक्ष- दयानन्द संस्थान

वेद मन्दिर १५९७, हरध्यान सिंह मार्ग, करौल बाग, नई दिल्ली-५

Scanned with CamScanner

सार्व० सत्यार्थ प्रकाश शताब्दी उदयपुर के अवसर पर
पूज्य गुरुवर स्व० प० गंगा प्रसाद उपाध्याय को समर्पित,

ओ३म्

सत्यार्थ प्रकाश का चमत्कार

"यही सज्जनों की रीति है कि अपने वा पराए दोषों को दोष और गुणों को गुण जानकर गुणों का ग्रहण और दोषों का त्याग करें।" सत्यार्थ प्र० अनु० भू० १४ समु०

ऋषि के स्वप्न सत्य का पूरक, लिए विकल हित सुख सदेश,
पाप-ताप को भस्म करेगा, फैलाएगा प्रभु आदेश।
कष्ट कठिन में जले न कोई, आत्म आत्म का हो कल्याण,
क्रूर निशा का भैरव क्रन्दन, छा न सके बनकर व्यवधान ॥

⊙ लेखक ⊙
पं० श्याम किशोर आर्य सिद्धान्त शास्त्री
(विशेष सहयोगी श्री विश्व प्रकाश आर्य)

⊙ प्रकाशक ⊙
श्री वेदप्रिय आर्य
टंकारा ज्योति प्रकाशन
२२० चौखंडी, कृष्णनगर, प्रयाग

अक्टू० १९८१ मूल्य १५ पैसा

Scanned with CamScanner

⊙ सत्यार्थ प्रकाश के विषय में विद्वान विभूतियों की सम्मतियां ⊙

(१) श्रद्धेय वीर सावरकर-सत्यार्थ प्रकाश की विद्यमानता में कोई विधर्मी अपने मजहब को शेखी नहीं मार सकता।

(२ क्रान्तिकारी राम प्रसाद बिस्मिल-मैं सत्यार्थ प्रकाश पढ़कर ही इस रूप में आया।

(३) रि० स्का० पं० गुरूदत्त एम० ए०-मैंने सत्यार्थ-प्रकाश को न्यून से न्यून १४ बार पढ़ा है जितना बार पढ़ता हूं, मुझे तन मन व आत्मा के लिए कुछ न कुछ नया आनन्द प्राप्त होता है, पुस्तक गूढ़ तत्वों व सच्चाइयों से भरी है.—यदि सत्यार्थ प्रकाश का एक प्रति का मूल्य एक हजार रुपया होता तो भी उसे सारी सम्पत्ति बेचकर खरीदता। यह अद्वितीय पुस्तक हर मूल्य में सस्ती है।

(४) सेठ जुगुल किशोर बिड़ला-सत्यार्थ प्रकाश सत्य सनातन धर्म का उपदेश देते हुए अंधश्रद्धा और पाखंड को दूर करता है, तर्कशक्ति का विकास करता है। मनुष्य मात्र के कल्याण की भावना से यह ग्रंथ लिखा गया है, किसी के प्रति उसके भीतर द्वेष नहीं है। इसाई व मुसलमान १३ वें तथा १४ वें समुल्लासों को द्वेषरहित होकर पढ़ें तो वे भी धर्म के तत्व का समझने में समर्थ होंगे। सत्यार्थ प्रकाश की रक्षा में समस्त हिन्दू आर्य समाजियों का साथ देंगे, इसका मुझे विश्वास है।

५) कांग्रेस के संस्थापक श्री ए० ओ० ह्यूम-स्वामी दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश पढ़ने योग्य है जो कि अंधकार को भगाता है।

(६) पंजाब केसरी ला० लाजपत राय-सत्यार्थ प्रकाश मेरे जीवन में प्रकाश देने वाले सूर्य के समान है।

Scanned with CamScanner

सत्यार्थ प्रकाश का चमत्कार

जगद्गुरू महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अनेक कष्ट सहकर जो ज्ञान गुरूवर विरजानन्द जी से पाया। उसे उन्हीं की इस आज्ञा से कि, "दय नद! वेद विद्या का सूर्य मतमतान्तरों के बादलों से ढक गया है, उसे तुम तूफान बन कर छांट दो।" गुरू आज्ञानुसार आदित्य ब्रह्मचारी ने आदित्यवत् हिमालय की चोटी से ललकारा,

"परमात्मा की वाणी वेद है–अब वेद सूर्य निकल आया है, अतः चांद दीपक और जुगनुओं का जमाना बीत गया लौटो वेदों की ओर लौटो। यदि तुम्हें किसी भी दिशा में मार्ग दर्शन लेना है, तो वेद ही सरल, सुगम एवं निश्चित दिशा देगा।"

ऋषि दयानंद की ललकार से भारत ही नहीं विश्व प्रभावित हुआ प्रत्यक्ष एवं परोक्ष में। वह चाहे अमेरिका का विश्व धर्म सम्मेलन रहा हो अथवा संयुक्तराष्ट्रसंघ का निर्माण। महर्षि दयानंद जी ने ही इसके मूल में क्रांन्ति बीज बोया है।

भारतवर्ष में सुधारकों का दल वह चाहे ब्राह्म समाज के महर्षि देवेन्द्र नाथ ठाकुर रहें हों, चाहे रवीन्द्र नाथ ठाकुर या बाबू केशव चन्द्र सेन, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, राजा राममोहन राय, परमहंस राम कृष्ण देव या स्वामी विवेकानन्द रहे हों अथवा मुसलमानों के सरसैय्यद अहमद खां या देवबंद उलूफ के संस्थापक, मिर्जा गुलाम अहमद कादियानी वा मौलाना अबुल कलाम आजाद वा रामपुर मकतब वाले हों सभी पर

Scanned with CamScanner

महर्षि का प्रभाव है। सभी ऋषि की वैचारिक क्रांति से प्रभावित हैं और अपने सिद्धान्तों को वेद तथा ऋषिदयानंद के अनुकूल बना रहे हैं अथवा ऐसा प्रयास करते हैं कि महर्षि दयानंद के आक्षेप से बचें।

महर्षि दयानंद ने वेद दुंदुभि बजाई और अपना अमर ग्रथ सत्यार्थ प्रकाश व ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका आदि लिखा। विभिन्न मतावलम्बियों से शास्त्रार्थ में विजय श्री पाई तथा जनमानस को सुगम भाषा में वैदिक विचार दिए, इसका चमत्कार अनूठा हुआ। जिसने एकबार आद्योपान्त सत्यार्थ प्रकाश ही पढ़ा वह अवश्य ही वैदिक धर्म में ऋषि दयानन्द की ओर खच गया। कितने भी विरोधी रहे हों, उनका बल कुंठित हो गया, क्योंकि वेद परमात्मा का ज्ञान है। परमात्मा से अधिक कोई ज्ञानी व बली नहीं है।

सत्यार्थ प्रकाश का अध्योता ही जीवन का मोह छोड़कर प्रत्येक बलिदान दे देता है परन्तु अन्याय, अत्याचार और अविद्या से समझोता नहीं करता।

भारतवर्ष में पुराणधर्मी बंधु अब अश्लील व अविश्वसनीय कथाओं को अलंकारिक वर्णन बताने लगे हैं। पुराणों में से प्रक्षिप्त अशों क्षेपक) को स्वीकार करते हैं, अनेकों प्रथाओं धर्माडम्बरों व मान्यताओं को जिसके लिए शास्त्रार्थ करते थे, अब शास्त्रार्थ न करके स्वयं छोड़ने लगे हैं।

जब हिन्दू जाति के महापुरुषों राम एवं कृष्ण तथा महाभारत व रामायण के काल सम्बंधी प्रमाण एवं ऐतिहासिकता का प्रश्न उठता है तब आर्य समाज के विद्वान तथा सत्यार्थ प्रकाश के जिज्ञासु ही इन मोर्चों को संभालते हैं।

Scanned with CamScanner

जैन धर्म के विद्वान श्री दलसुख मावणिया, पं० पन्ना लाल जैन साहित्याचार्य, श्री बच्छराज सिंघी, श्री जगमन्दर लाल जैनी एम. ए.; चांद मल जैन स्थानकवासी तथा ब्रह्मचारी सुन्दर लाल जैन अपने ग्रंथ में सत्यार्थ प्रकाश की समीक्षा का अनुमोदन करते हैं।

इसाई जगत के मूर्धन्य पोल पाल ने भारत आगमन पर उपनिषद् के असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्माऽमृतम गमयः ।। का पाठ अपने उपदेश क्रम में किया।

इसाइयत की मात्र बाइबल का अनुवाद भिन्न-२ सस्करणों में में बदलता रहता है, रोमन कथोलिक भारतवष में पद्यासन में उपासना करने को शिक्षा देते हैं।

पादरी सन्दरलैंड ने स्वीकार किया है; "यह इस तथ्य से देखा जा सकता है कि समस्त क्रिश्चियन जनता चाहे वे कट्टर हों अथवा उदार हों, आज बाइबिल की दासता, बहुविवाह सम्बधी नियम जादूगरनियों को मार देने की बातें, सृष्टिरचना क्रम व भूगोल आदि की शिक्षाओं को अस्वीकार करते हैं। ... नूतन सुसमाचार का सशोधित संस्करण नूतन सुसमाचार के प्रामाणिक सस्करण से ३६००० से अधिक स्थानों में भिन्न है। ... बाइबल में कई बातें सर्वथा बेहूदा है, परस्पर विराधा हैं, इतिहास के विरुद्ध हैं। प्रोफेसर विग्स ने माना है, "जहां तक मैं देखता हूं बाइबिल में अशुद्धियां हैं और इसका कोई निराकरण नहीं कर सका और यह मत कि यह भूलें मूल में नहीं था; केवल कल्पना है। ... बाइबिल की निर्दोषता बच्चों को डराने

लेखक श्री स्वामी देवानन्द सरस्वती के अमूल्य ज्ञान भंडार का आभारी है।

के लिए वर्तमान पादरियों का बनाया हुआ एक भूत है।"

बर्मिङ्घम के बिशप डाक्टर वान्स ने स्पष्ट शब्दों में घोषणा किया, "अब मैं कुछ विरोध के विषय में कहने के पूर्व उन सम्भावनाओं को स्पष्ट करना चाहता हूं कि बहुत से भूत-कालीन विश्वासों तथा मान्यताओं को धर्म के साथ मिलाना समाप्त कर दिया गया है। यह विज्ञान की सीधी चुनौती के सम्मुख ठहर नहीं सकते, विज्ञान विजयी रहेगा।" कुछ स्पष्ट उदाहरण उपस्थित है- (i) पृथ्वी स्थिर नहीं है वरन यह सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करती है- (ii) मनुष्य विशेष रूप से नहीं बनाया गया (iii) कोई पुरोहित संस्कार या वाह्याडम्बर से आध्यात्मिक सम्पदा नहीं पा सकता। (iv) चमत्कार के द्वारा कोई प्रकृति के नियम के विरुद्ध कार्य नही कर सकता, ऐसे चमत्कार किसी मनुष्य द्वारा कभी नहीं हुए।

यह नितान्त सत्य है कि ईसामसीह १२ से ३० वर्ष तक अपने अज्ञातकाल में भारत में अपनी ज्ञान पिपासा शान्त करके ३१ वर्षोपरान्त पर्वत पर पहला उपदेश दिया। जिसे श्री नोटा-विच ने सिद्ध किया है।

सर टामस पेन, बर्नाड शा, तालस्ताय, इंगलसोल आदि ने बाइबिल की तीव्रतम आलोचना की है।

इस्लाम की मान्यताएं भी सत्यार्थ प्रकाश तथा महर्षि दयानन्द से अत्याधिक प्रभावित हुई हैं। मदरसा बरेली व मद-रसा देवबन्द दानों लगभग विरोधी मान्यता रखते हैं। देवबन्द उलूम के संस्थापक मौ० अब्दुल कासिम साहब का स्वामी दया-नन्द से चादपुर के मेले में शास्त्रार्थ (वार्तालाप) हुआ था। उनके अनुयायी गुरूडम, अंधविश्वास, कबरपरस्ती आदि का खंडन

Scanned with CamScanner

करते हैं

अलीगढ़ वि० वि० के संस्थापक सर सैयद अहमद खाँ का वैचारिक सम्बन्ध ऋषि दयानन्द से था, ऋषिवर प्रायः उनके घर पर ही रुकते थे। इन्होंने अपने तफसीरुल कुरान में जन्नत के बारे में लिखा है, "यदि स्वर्ग यही है, तो बिला मुबालिग हमारे खाराबात (वेश्यालय) इससे हजार गुने अच्छे हैं। (पृ० ३३)..... एक कूड़मगज (रुढ़िवादी) मुल्ला या शहवतपरस्त जाहिद यह समझता है कि वास्तव में स्वर्ग में अत्याधिक खूबसूरत अनगिनत हूरे मिलेंगी, शराब पियेंगे, मेवे खाएगे, दूध और शहद की नहरों में नहाएगे और जो दिल चाहेगा, मजे उड़ाएगे। ..... और इस वेहूदा ख्याल से दिन रात अवामार को बजा जाने और गवाही से बचने की कोशिश करता है और इस नतीजे पर पहुँचता है।" – (पृ० ३५)

मिर्जा गालिब ने घोषणा की –

(१) ऐसे जन्नत को लेकर क्या करें, जिसमें लाखों बरस की हूरे हैं।

(२) खूब मालूम है, जन्नत की हकीकत लेकिन,
दिल के बहलाने को गालिब यह ख्याल अच्छा है।

(३) वो दीनो हिजाजी का बेबाक बेड़ा,
निशा जिसका अकसाए आलम में चमका।
न जेहू में झिझका न कुलजम में अटका,
मुकाबिल हुआ कोई खतरा न जिसका॥
किए सर परसर जिसने सातों समन्दर,
वो डूबा दहाने में गंगा के आकर॥ (मौलाना हाली)

मीरे अरब को आई ठंडी हवा जहां से, मेरा वतन वही है
(इकबाल)

Scanned with CamScanner

मौलाना अबुल कलाम आजाद ने कुरान और धार्मिक मतभेद तथा अपने कुरान भाष्य में उदारवादी दृष्टिकोण अपनाया है तथा अपने 'सवाने उमरी' में लिखते हैं कि भारत में सर्व प्रथम ईरान से मात्र १५० मुस्लिम हो आए थे जो भारतीय उपमहाद्वीप में आज २५ करोड़ की संख्या पर पहुँच चुके हैं

कादियानी मौलाना मोहम्मद अली ने अपने कुरान भाष्य में दुनिया के आरंभ में एक आदम न मानकर कई आदमियों के उत्पन्न होने की कल्पना स्वीकार की है तथा यह पहली सृष्टि नहीं है ऐसी घोषणा की।

सर अहमद हुसैन कहते हैं, मैं इस्लाम को मुहम्मदी धर्म से पृथक मानता हूँ। मुहम्मदी धर्म वास्तविक और शुद्ध इस्लाम नहीं है, वह इस्लाम की आत्मा को भूल गया है और केवल नियमों की शब्दावली को याद किए है।

हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति राधाकृष्णन का छः दर्शनों में अविरोध, उत्पत्तिक्रम तथा अपना चिन्तन पूर्णतया ऋषि दयानन्द व सत्यार्थ प्रकाश के विचारों से प्रभावित है।

लोकमान्य तिलक पं० मदन मोहन मालवीय व वीर सावरकर स्वीकार करते हैं कि सत्यार्थ प्रकाश ऐसा पारस पत्थर है जिसमें कैसा भी लोहा हो, सोना बन जाता है, इसकी अग्नि में सबों के मैल जलकर उसे शुद्ध कुन्दन स्वर्ण बना देता है।"

सत्यार्थ प्रकाश मानव मात्र में मानवता का ब्रह्मास्त्र है, जिससे सद्विचारों का रक्षण कथा कुविचारों का नाश होता है, या यों भी कहें कि विश्व में मानवता का विश्वकोष तथा सत्य अर्थ का प्रकाशक है।

वीरेन्द्र प्रेस ३११, बहादुर गंज इलाहाबाद

वैदिक पुस्तकालय मुम्बई

Scanned with CamScanner